श्री ।

गिरिधररायकृत-

कुण्डलिया ।

जिसमे

ज्ञान विज्ञान नीति, वैराग्यादि, उपदेश रोचक कुडलियोंमे वर्णित है ।

वही निर्मल प० स्वामि गोविन्द सिंह साधुजीसे परिशोधन कराय,

खेमराज श्रीकृष्णदासने

मुम्बई

निज "श्रीवेङ्कटेश्वर" छापाखानेमें

मुद्रितकर प्रसिद्ध किया ।

ज्येष्ठ स १९५७ वि

प्रस्तावना।



इस ईश्वरीय सृष्टिमे प्राय यावत् प्राणीवर्ग ऐसाही देखने मे अताहै जो कि अपनी मातृभाषासे स्पष्ट वाग्व्यवहार करता हुआ परस्पर एक दूसरेके तात्पर्य्यके बोधनमें समर्थ होताहै। उसमें भी इस पुरुष वर्गमें कही कही ऐसी चमत्कृति देखनेमें आती है कि समय २ पर यह ऐसा उचित तथा पक्षपातर हित न्यायगर्भित बोलता है जो कि आबाळ वृद्ध राजासे लेकर रक तक उसको सभी धर्म शासनावत् या राज शासनावत् बुद्धि पूर्वक स्वीकार करतेहै। उदाहरण के लिये जैसे इस गत १८ शताब्दीमें होने वाला (गिरिधर) उपनामक हरिदास सज्ञक उदासीन साधु हुआहै वैसा समयानुरूप सर्वमान्य उचितवक्ता शीघ्रहोना कठिनहै यह कोई किसी शास्त्रका विद्वान् या अनेक ग्रन्थोंका रचयिता प्रख्यात कवि नथा किन्तु एक साधारण प्रकृतिका अनुभवी तथा शान्त विरक्त साधु महात्मा था मातृ भूमि इसकी पंचाब तथा साधुवेशसे विचरना इसका प्राय गगाजीके तीरपर हुआ करता था यह विरक्त होनेंसे अपनी रचना के लिखने पढनेका बखेडा नहीं करताथा किन्तु समय २ पर अपने भावको शीघ्र कविकी तरह कुण्डळी या छन्दमे कहा करताथा कभी२कोई समीपवर्ती महात्मा उसको रोचक जानकर सर्वोपकारार्थ लिखभीलेता तो एकसे दूसरा उससे फिर दूसरा

ऐसेही वह वचन डाक पत्रकी तरह प्रचार पाताथा ऐसेही कतिपय वचन इनके सर्वदेश साधारण तथा सर्व मान्य जानकर मैने इनके प्रकाश करनेके अभिप्रायसे अनेक साधु महात्माओंके आगे इनके संग्रहकी प्रार्थना करी परन्तु ऐसे निरपेक्ष महानुभावका पवित्रलेख एक स्थानमें सगृहीत विना प्रयत्नसे मिले कहां ?मिलेभी तो दश बीस या सौ पचास वचन मिलें उनका मै यथा प्रकाश करू ऐसे विचारहीमे गत कार्तिकमें मान्यवर श्रीमान् श्रीस्वामी आत्माराम उदासीनजी देशाटन करते हुए मुम्बई नगरमे पधारे तो मैने अपना हार्द उनके आगे निवेदन किया तो उन्होने कृपाकर मेरेको यह उत्तम सग्रह प्रकाश करनार्थ प्रदान किया इसलिये मै उनको कोटिशः धन्यवाद देताहू तथा ऐसेही और माहात्मा ओंको भी उत्तम सग्रहकी प्रार्थना करताहू कि मै भी महात्माओंके वचनो को प्रकाश कर पुण्य विशेषका भागी बनू—इतिशम् ॥

आपका कृपाकांक्षी—

खेमराज श्रीकृष्णदास,

"श्रीवेङ्कटेश्वर" यन्त्रालयाधीश—मुंबई.

श्रीगणेशाय नमः ।

गिरिधररायकृत-

* कुण्डलिया. *



प्रथमभाग १.

दोहा-एक रदन गजमुख वदन, सुमति सदन गणराज ।
मूषक वाहन नाय शिर, पूजत आपन काज ॥

कुंडलिया ।

जय जय श्री वेङ्कटरमण शेषाचल महराज ।
अष्ट सिद्धि नव निद्धिदा भक्तन सारन काज ॥
भक्तन सारन काज करो दाया अपनी विभु ।
जन उपकारी काज आज श्री खेमराज प्रभु ॥
गिरिधरकृत कुण्डली ख्यात तुम्हरे पद नय नय ।
चंचल चतुर सुजान काज तुवपद करि जय जय॥
जियबो मरिबो ये उभै नहिं हैं अपने हाथ ॥
जानत है वे नन्दसुत बिहँसत बछरनसाथ ॥

विहँसत बछरनसाथ चारियुगके रखवारे ।
इंद्रमान जिन हरचो विपति के काटन हारे ॥
कह गिरिधर कविराय ज्वाव शाहनसे करिवो ।
आछत सीताराम उमिरि अपनी भरि जीवो॥२॥
पुत्र प्राणते अधिकहै चारिउ युग परिमान ।
सो दशरथ नृप परिहरेउ, वचन न दीन्हों जान ।
वचन न दीन्ह्यों जान बड़ेनकी बूझि बड़ाई ।
वातरहै सो काज और वरु सरवस जाई ॥
कह गिरिधर कविराय भये नृप दशरथ ऐसे ।
पुत्रप्राण परिहरे वचन परिहरे न ऐसे ॥ ३ ॥
साईं वेटा वापके विगरे भयो अकाज ।
हरणाकश्यप कंसको गयउ दुहुँनको राज ॥
गयउ दुहुँनको राज वापवेटामे विगरी ।
दुश्मन दावागीर हँसै बहु मण्डलनगरी ॥
कह गिरिधर कविराय युगन याहीं,चलि आई ।
पिता पुत्रके वैर नफा कहु कौने पाई ॥ ४ ॥

बेटा बिगरो बापसों, करि तिरियन को नेहु ।
लटापटी होनेलगी मोहिं जुदा करिदेहु ॥
मोहिं जुदा करिदेहु घरीमा माया मेरी ।
लेहौं घर अरु द्वार करौं मैं फजिहत तेरी
कह गिरिधर कविराय सुनो गदहाके लेटा
समय परचोहै आय बापसे झगरत बेटा ॥ ५ ।
रही न रानी कैकयी अमर भई यहबात
कवनपूर्वले पापते बन पठयो जगतात ।
बन पठयो जगतात कन्त सुरलोक सिधारेउ
जेहिसुत काजे मरेउ राउ नहि वदन निहारेउ ।
कह गिरिधर कविराय भई यह अकथकहानी ।
यश अपयश रहिगयउ रहीनहिं केकयिरानी॥६॥
साई ऐसे पुत्र से बांझरहै वरु नारि ।
बिगरीबेटे बापसे जाय रहै ससुरारि ॥
जायरहै ससुरारि नारिके नाम बिकाने ।
कुलके धर्म्म नशाय और परिवार नशाने ॥

कह गिरिधर कविराय मातुझक्खे वहि ठाईं ।
असिपुत्रिनि नहिं होय बांझ रहतिउँ वरुसांईं ७॥
नारी अतिवल होतहै अपनो कुलहि विनाश ।
कौरव पांडव वंशको कियो द्रौपदी नाश ॥
कियो द्रौपदी नाश कैकयी दशरथ मारेउ ।
राम लपणसे पुत्र तेऊ वनवास सिधारेउ ॥
कह गिरिधरकाविराय सदा नर रहै दुखारी ।
सो घर सत्यानाश जहां है अतिवल नारी ॥ ८ ॥
मक्करवाली नारिको, मारा ना मिमिआइ ।
सरिता बोलै मोरसों, जियत भुवंगै खाइ ॥
जियत भुवंगै खाइ मुनिनके जिय तरसावै ।
कौतुक अपनाकरै कुँवरिके अंक लगावै ॥
कह गिरिधर कविराय जैस खांड़ेकी धारा ।
देखै हृदय विचारि नारि यह बड़ी मकारा ॥९॥
नारी परघर जाइ अरे यह भला न मानै ।
जो घर रहै निदान, चालभापा पहिचानै ॥

भाषाचालपिचानि वहुरि उतपात न होई।
जो कुछ लागै दोष अरे सुन आवै रोई॥
कह गिरिधर कविराय समयपर देत हैगारी।
मरापुरुष जिय जान जवै पर घर गइनारी॥१०॥
काचीरोटी कुचकुची, परतीमाछी वार।
फूहर वही सराहिये, परसत टपकै लार॥
परसत टपकै लार झपटि लरिका सौचावै।
चूतर पोंछै हाथ दोउकर शिर खजुवावै॥
कह गिरिधर कविराय फूहर के याहीधैना।
कजरौटा नहिं होइ लुकाठै आंजै नैना॥११॥
चिन्ता ज्वाल शरीरकी, दाह लगै न बुझाय।
प्रकट धुवां नहि देखिये, उरअन्तर धुँधुवाय॥
उर अन्तर धुँधुवाय जरै जस कांचकी भट्ठी।
रक्तमांस जरि जाइ रहै पांजरिकी ठट्ठी॥
कह गिरिधर कविराय सुनोरे मेरे मिन्ता।
वे नर कैसे जियैं जाहि व्यापी है चिन्ता॥१२॥

साईं पुर ज्वाला उठो, आसमानको धाय ।
अन्धहि पंगुहि छोड़िकै, पुरजन चले पराय ।
पुरजन चले पराय अन्ध इक मंत्रविचारो ।
पंगुहि लीन्हें कन्ध डीठ वाके पगुधारो ॥
कह गिरिधर कविराय सुमति ऐसी चलि आई ।
विना सुमति को रंक पंक रावणभे साई ॥ १३ ।
सुवा एक दाड़िमके धोखे गयो नारियलखान ।
कछु खायो कछु खान न पायोफिरलागोपछितान।
फिर लागो पछितानबुद्धिअपनीको रोवा ॥
निर्गुणियनके साथ बैठि अपने गुण खोवा ॥
कहगिरिधर कविराय सुनोहो मोरे नोखे ।
गयो झटाका टूटि चोंच दाड़िमके धोखे ॥१४॥
सोरठा–शुकनेकह्यो सँदेश, सेमरकेपग लागिहौं ।
पगनपरैवाहि देश, जबसुधिआवैफलनकी ॥

कुण्डलिया ।

भूलो चातक आइकै, घटाधुवांको देखि ।

यह जानीजस जलजहै बादर श्याम विशेखि ॥
बादर श्याम विशेखि देखि तोताकोधायो ।
एकसमय संकटपरे को न काके घरआयो ॥
कह गिरिधर कविराय धुवांको यह फल पायो ।
जोजलको तूगयो सोइ नयननजलआयो ॥१५॥
साईं बैर न कीजिये गुरु पण्डित कवियार ।
बेटा बनिता पँवरिया यज्ञ करावनहार ॥
यज्ञ करावनहार राजमंत्री जो होई ।
विप्रपरोसी वैद्य आपको तपै रसोई ॥
कहगिरिधर कविराय युगनते यह चलिआई ।
इन तेरहसो तरहदिये बनि आवै सांई ॥ १६ ॥
बैरी बँधुवा बानियां ज्वारी चोर लवार ।
बटपारी रोगी ऋणी नगरनारिको यार ॥
नगरनारिको यार भूलि परतीत न कीजै ।
सौ सौगँदैखाइ चित्तमे एक न दीजै ॥
कह गिरिधर कविराय घरै आवै अनगैरी ।

मुँहसे कहै बनाय चित्तमें पूरो बैरी ॥ १७ ॥
बनियां अपने बापको ठगत न लावे बार ।
निशिवासर जननी ठगै जहां लेत अवतार ॥
जहांलेत अवतार मास दश उदरमें राखै ।
गुरुसे करै विवाद आप पण्डितहै भाखै ॥
कह गिरिधर कविराय व्यचे हरदी औ धनियां ।
मित्र जानि ठगिलेहि जहांलग भक्ता बनियां १८॥
आटामे आटा घटै घटै दालमें दार ।
कबहुँक घटिहै घीवमहँ तौ हमसे ह्वैहै रार ॥
हमसे ह्वैहै रार मारि जूतिनजी लैहो ।
जानै सकल जहान दाम एको ना देहौं ॥
कह गिरिधर कविराय बैठिहौं तुम्हरे घाटा ।
पनाहिन मूड़ ठठैहो जो कहुँ घटिहै आटा ॥१९॥
झूंठे मीठे वचन कहि ऋण उधार लेजाय ।
लेत परमसुख ऊपजे लैके दियो न जाय ॥
लैके दियो न जाय ऊंच अरु नीच बतावै ।

ऋण उधारकै रीति मांगतै मारन धावै ॥
कह गिरिधर कविराय जानिरहे मनमें रूठा।
बहुत दिना ह्वैजाय कहै तेरो कागज़ झूंठा ॥२०॥
सोना लादन पिवगये सूना करिगये देश।
सोना मिले न पिव मिले रूपाह्वैगे केश ॥
रूपा ह्वैगे केश रोय रँग रूप गँवावा।
सेजनको विश्राम पिया विन कबहुँ न पावा ॥
कह गिरिधर कविराय लोन विन सबै अलोना।
बहुरि पियाघर आव कहा करिहो लैसोना ॥२१॥
मोती लादन पिवगये धुरपटना गुजरात।
मोती मिले न पिवमिले युग भरि बीती रात ॥
युगभरि बीती रात बिरहिनी आनि सतावै।
चौकिपरी ब्रजनारि पियाको लिखा न आवै ॥
कह गिरिधर कविराय गोपिका यहकह रोती।
आगि लगै वह देश जहां उपजातिहै मोती ॥ २२॥
जाकी धन धरती हरि ताहि न लीजै संग।

जो चाहै लेतो बनै तो करिडारु निपंग ॥
तो करि डारु निपंग भूलि परतीत न कीजै ।
सौ सौगन्दै खाय चित्तमे एक न दीजै ॥
कह गिरिधर कविराय कबहुँ विश्वास न वाको ।
शत्रु समान परिहरिय हरिय धन धरती जाको ॥
साई सत्य न जानिये, खेलि शत्रु सँगसार ।
दांवपरे नहिं चूकिये, तुरत डारिये मार ।
तुरत डारिये मार मरद कच्ची करिदीजै ।
कच्ची होय तो होय मारि जगमे यशलीजै ॥
कह गिरिधर कविराय युगन याही चलिआई ।
कितनो मिलै धधाय शत्रुको मारियसांई ॥ २४ ॥
नदी न छोड़िय तीरसो, जो बरषा सरसाइ ।
बाढ़ि बाढ़ि दिन चारिको, अपयश जन्म नशाइ॥
अपयश जन्म नशाइ वही पाहनकीरेखा ।
बड़ी बड़ाई लहत सदा हम कबहुँ न देखा ॥
कह गिरिधर कविराय नेक नेकी नहिं तोड़ा ।

वदीकिये काहोय नदीको तीर न छोड़ा ॥ २५ ॥
दौलत पाइ न कीजिये, सपनेमें अभिमान ।
चंचलजल दिन चारिको, ठाउँ न रहत निदान ॥
ठाउँ न रहत निदान जियत जगमे यशलीजै ।
मीठे वचन सुनाय विनय सबहीकी कीजै ॥
कह गिरिधर कविराय अरे यह सबघटतौलत ।
पाहुन निशि दिन चारि रहत सबहीकेदौलत २६॥
गुणके गाहक सहसनर, बिनु गुण लहै न कोय ।
जैसे कागा कोकिला शब्द सुनै सब कोय ॥
शब्द सुनै सबकोय कोकिला सबै सुहावन ।
दोऊको यहरंग काग सब भये अपावन ॥
कह गिरिधर कविराय सुनोहो ठाकुर मनके ।
बिनु गुण लहैं न कोइ सहस नर गाहकगुणके॥२७॥
मित्रबिछोहा अतिकठिन, मतिदीजै करतार ।
वाके गुण जब चित चढैं, वर्षत नयन अपार ॥
वर्षत नयन अपार मेघ सावन झरिलाई ।

अब बिछुरे कब मिलो कहो कैसी बनिआई ।
कह गिरिधर कविराय सुनोहो विनतीएहा ।
हेकरतार दयालु देहु जनि मित्रविछोहा ॥ २८ ॥
साईं तहां न जाइये, जहां न आप सोधाय ।
वरन विषै जाने नहीं, गदहा दाखें खाय ॥
गदहा दाखें खाय गऊपर दृष्टिलगावै ।
सभावैठि मुसक्याय यही सब नृपको भावै ॥
कह गिरिधर कविराय सुनोरे मेरेभाई ।
तहां न करिये वास तुर्त उठि आइय साँई ॥२९॥
गया पिण्ड जो देइ पितरको अपने तारै ।
करजवाप करदेइ लटे परिवार सँभारै ॥
हरी भूमि गहिलेइ द्रवन शिर खड्ग बजावै ।
पर उपकारज करै पुरुषमे शोभापावै ॥

जेहि हाथे हाथी हन्यो तेहि मेढक जनिमार ॥
तेहि मेढ़क जनिमार कुलहि जनि दोष लगावै।
बरु फाँका करि मरै जगतमैं शोभापावै ॥
कह गिरिधर कविराय हँसै जम्बुक औ दिगिनि।
समय परेकी बात सिंहका सिखवै सिंहिनि॥३१॥
हिरना विरझेउ सिंहसे औझरखुरी चलाय।
झारखण्ड झीनापर्यो सिहा चलोपराय ॥
सिंहा चलोपराय समय समरत्थ विचारी।
कलिहि कालमालाइ हँसै हँसिकै पगधारी॥
कह गिरिधर कविराय सुनोहो मेरे अरना।
आजुगई करिजाय सकारे मै की हरना ॥ ३२ ॥
बगुला झपट्यो बाजपर बाज रह्यउ शिरनाय।
दै अँधियारी पगुबंध्यो चेटक दैफहराय ॥
चेटकदै फहराय धनी बिनु कौन चलावै।
डरै सांकरी डार करै जो जो मन भावै ॥
कह गिरिधर कविराय सुनो पश्चिम के नकुला।

समय पलाटे आय बाजपर झपटत बगुला॥२३॥
फुद्की फुद्कत बाजपर बाजरहतहै लाज ।
बहुतदिनन में गमनकरि त्वहिंमारतहौं आज ॥
त्वहिंमारतहौं आज बाज टरिजाउ यहांसे ।
जब मैं करिहौं कोप तबै तुमबचौकहांसे ॥
कह गिरिधर कविराय बाजपर उलरइधुधकी ।
समय परेकी बात बाज कहँ धिरवै फुद्की॥२४॥
पाता बड़बड़ देखिकै चढे कमंठो धाय ॥
तरुवरहोयतौ भारसह टूटे रड़ अरराय ।
टूटे रड अरराय जाय अंतहिह्वैफूली ।
बतियां गई लोभाय कहा धौं मारगभूली ॥
कह गिरिधर कविराय यहै नीचनकीवाता ।
अब न जाउँ वाहिठाउँ देखिकै बड़ बड़ पाता॥२५॥
साईं सब संसारमे मतलबका व्यवहार ।
जबलगि पैसा गांठमें तबलग ताको यार ॥
तबलग ताको यार संगही सँगमें डोलै ।

पैसा रहा न पास यार मुखसे नहिं बोलै ॥
कहगिरिधर कविराय जगत यहि लेखाभाई ।
बिनु बेगरजी प्रीति यार बिरला कोइसांई ॥३६॥
दादुरकेर दरेरपर लै फणपति निजशीश ।
समय आपनो जानिकै मनहिं न लायो ईश ॥
मनहिं न लायोईश शीशपर बाल्यो भाई ।
पर्यो आपदाआय लाजपति सबै गँवाई ॥
कहगिरिधर कविराय कहां लै आनी आदर ।
गुणकीमति घटिगई शीशपर बोलै दादुर॥३७॥
केचुवा नागिनिसे कहै सुनो न हेतु अचार ।
हम तुमसे अस रीतिहै लाख भांति व्यवहार ।
लाखभांति व्यवहार ब्याह सावनमें कीजै ।
क्वार चैतको घाम कटक दल हमरोछीजै ॥
कह गिरिधर कविराय कहांसे आये हेतुवा ।
शेषनाग मरिजाय नागिनिहिं व्याहैकेंचुवा ॥३८॥
कोईभवँर गुलावतजि गये जो हुरहुरपास ।

घरिक समान अवारहै करकस आई वास॥
करकस आई वास आक पासहुसे भागे।
अपने मन पछिताय फेर वाही सँगलागे॥
कह गिरिधर कविराय कुमति अस फजिहत होई।
जोइ बड़ेनकी छोड़ि नीच घर आवे सोई॥३९॥
भँवर भटैया चाहु जनि कांट बहुत रसथोर।
आश न पूजे वासरा तासों प्रीति न जोर॥
तासों प्रीति न जोर तोर कुल कमल सँघाती।
पपिहा रटै पियास बुंदजल आवै स्वाती॥
कह गिरिधर कविराय बैठु परमलकी छैयां।
बरु मरु जिय तरसाइ जाहु जानि भँवर भटैया ४०
दोहा-भौरा वह दिन कठिनहै,दुख सुख सहैशरीर।
जब लग फूले केतकी, तब लग बैठु करीर॥

कुंडलिया।

हीरा अपनी खानिको बारवार पछिताय।
गुण कीमत जानै नहीं तहां बिकानोआय॥

तहां विकानो आय छेदकारि कटि मे वांध्यो ।
विनहरदी विनलोन मांस ज्यों फूहर रांध्यो ॥
कह गिरिधर कविराय कहां लगि धरिये धीरा ।
गुणकीमत घटिगई यहै कहि रोयोहीरा ॥ ४१ ॥
रहिये लटपट काटिदिन वरु घामे मा सोय ।
छाँह न वाकी वैठिये जो तरु पतरो होय ॥
जो तरु पत्तरो होय एकदिन धोखादैहै ।
जा दिन वहै वयारि टूटि तव जरसे जैहै ॥
कह गिरिधर कविराय छांह मोटेकी गहिये ।
पाता सब झरिजाय तऊ छाहैं मा रहिये ॥ ४२ ॥
पीवे नीर न सरवरो बूंदस्वाति की आश ।
केहरि तृण नहिं चरि सके जो व्रतकरै पचाश ॥
जो व्रत करै पचाश विपुल गज युत्थ विदारै ।
सुपुरुप तजै न धीर जीव वरु कोऊ मारै ॥
कह गिरिधर कविराय जीवजोधक भरिजीवै ।
चातक वरु मरिजाय नीरसरवर नहिं पीवै ॥४३

हंसा हियें रहिये नहीं सरवर गये सुखाय ।
कालिह हमारी पीठपै बगुलाधरिहै पांय ॥
बगुला धरिहैं पॉय इहां आदर नहिंह्वैहै ।
जगत हँसाई होय वहुरि मनमे पछितैहै ॥
कह गिरिधर कविराय दिनै दिन बाढ़े संसा ।
याहूसे घटिजाय तबैका करिहैं हंसा ॥ ४४ ॥
हॅसा उड़ि दिशिकहँ चले सरवर मीत जुहार ।
हम तुम कबहूं भेंटि है संदेशन व्यवहार ॥
संदेशन व्यवहार सदा जल पूरण रहियो ।
सुख सम्पति धनराज्य सदा चिरजीवत रहियो ॥
कह गिरिधर कविराय कीरकी रही न संसा
दै अशीश उड़िचले देश अपनेको हंसा ॥ ४५ ।
सैयांभये तिलंगवा वौहरचली नहाय ।
देखि डरी कप्तानकहँ कौन जनारोआय ॥
कौन जनारो आय काहदहुँ पहिरेबाटे ।
बिनगुनाह तक्सीर सैयांको ठाढ़ेडाटे ॥

कहगिरिधर कविराय नवै जस वन्दर भल्ला ।
तोसदान वन्दूक हाथमे पत्थरकल्ला ॥ ४६ ॥
साई जगमे योगकरि मुक्ति न जाने कोय।
जब नारी गवने चली चढ़ीपालकीरोय ॥
चढ़ी पालकीरोय जान नहिं कोई जीकी ।
रही सुरति तनछाय सुछतिया अपने हियकी ॥
कह गिरिधर कविराय अरे जनिहोहु अनारी ।
मुँहसे कहै वनाय पेटमे विनवै नारी ॥ ४७ ॥
दोहा-नवलनारि रोवै नहीं, कहै पुकारि पुकारि।
जस पिय तुम हमसन करी,वैसेकरव प्रचारि॥

कुण्डलिया ।

गढ़पतियनको धर्म्म है करै द्रुउनको ध्यान ।
जिमींदोज रैनीकरै मनका राखोजान ॥
मनकाराखोजान किलेपर तोप चढ़ावो ।
कोश कोश को गिरद काटि मैदान करावो।
कह गिरिधर कविराय राज राजनके सांई ।

अस गढ़पतिजो होइ ताहिको जंग नशाई ॥ ४८ ।
नारा कहै नदीनसन हम तुम एक समान
कछु हमतुमसनअधिकहैं अधिकहमारोमान ।
अधिक हमारो मान ताहि तव वरपा आये
वरसे नीर झराझर मनइ उवार न पाये ।
कह गिरिधर कविराय सुनोहो भाईपारा
समय परेकी वात नदी कहँ सिखवै नारा ॥ ४९ ।
चुगुल नचूकै कवहुँको अरु चूकै सव कोइ
वरकन्दाज कमानिया चूक उनहुँसे होइ ।
चूक उनहुँसे होय जे वांधैं वरछीगुल्ला
चूक उनहुँसे होइ पढ़े पंडित औ मुल्ला ।
कह गिरिधर कविराय कलाहू ते नटचूकै
चुगुल चौकसीदार ससुर कवहूं नहिं चूकै ॥५०।
मूसाकहै विलार सो सुनरे झूठझुठैल ।
हमनिकसतहैं सैरको तुम वैठत हो गैल ।
तुम वैठत हो गैल कचारि धक्कनसों

तुमहौ निपट गरीब कहा घर बैठे खइहौ ॥
कह गिरिधर कविराय बात सुनिये हो हूसा ।
बाउ दिननका फेर बिलारिहि सिखवै मूसा॥९१॥
कौवाकहै मरालसे कहाजाति कहगोत ॥
तुमऐसे बद रूपिया कहीं न जगमे होत ॥
कहूं न जगमे होत महाभैले मलखाना ।
बैठि कचेहरी जाय वेद मर्याद न जाना ॥
कह गिरिधर कविराय सुनोहो पंछी हौवा ॥
धन्य मुल्क यह देश जहांके राजा कौवा ॥९२॥
माकरि गिरगिटसे कहै का मारतिहौ सान ।
जो तुम्हरे हिरदैन महँ सो हमहूं अब जान ॥
सो हमहूं अब जान करब हम धनके जाला ।
जहां न तुम्हरी डीठि तहां अब हमरी जाला ॥
कह गिरिधर कविराय बात सुनिये हो धाकर ।
लगे चपेटा मोर तहां नहि तहँवा माकर ॥९३॥
नयना लगन अपारहै पटा अपटहै जाय ।

गुनगरुवातम शीलता धीरज धर्म नशाय ।
धीरज धर्म नशाय फेर वाही सँग छूटै ।
छिनक बुद्धिहोजाय फेर वाही सँग जूटै ।
कह गिरिधर कविराय सुनोहो मोरे भयना ।
कठिन प्रीतिकी रीति जहांलागें दुइनयना॥९४
नयनाकी नोकैं बुरी निकसजातजसतीर ।
हेरेघाव न पाइये वेधा सकल शरीर ।
वेधा सकल शरीर वैद का करै वैदाई ।
करिहो कोटि उपाय घाउ नहिं देत दिखाई ।
कह गिरिधर कविराय विरहनीदेत है चोकैं ।
समुझि बूझिके चलो बुरी नयनन की नोंकै॥९५
प्रीति कीजिये बड़ेनसो समया लावैपार ।
कायर कूर कुपुतहैं वोरि देत मँझधार ।
वोरिदेत मँझधार भीति की कवन बड़ाई ।
पछिताने फिरि देहिं जगतमे अपयश पाई ।
कह गिरिधर कविराय प्रीति सांची सिखि लीजै

व्यवहारी जो होय तऊ तन मन धन दीजै॥५६॥
साईं घोड़े आछतहि गदहन आयो राज।
कौआ लीजै हाथमे दूरिकीजियेबाज॥
दूरिकीजिये बाज राज पुनि ऐसो आयो।
सिंह कीजिये कैद स्यार गजराज चढ़ायो॥
कह गिरिधर कविराय जहां यह बूझि बड़ाई।
तहां न कीजे भोर सांझ उठि चलिये सांई॥५७॥
सांई अवसरके पड़े कौन सहै दुखद्वन्द।
जाय बिकाने डोमघर वै राजा हरिचन्द॥
वै राजा हरिचन्द्र करैं मरघट रखवारी।
फिरे तपस्वी वेष फिरे अर्जुन बलधारी॥
कह गिरिधर कविराय तपै वह भीम रसोई।
कोन करै घटिकाम एरे अवसरके सांई॥५८॥
कुसमै चले विदेशकहँ काची लादि कुम्हार॥
वर्षाऋतु वैरिनिभई बादर कीन्होमार॥
बादर कीन्होमार इतै उत कछुनहिं सूझै।

भरिगई ताल तलैयां नदी औ समुद्रकोबूझै
कहगिरिधर कविराय चले पहुँचे दिनदशमा
चला करम लै बाँधि चलैका अपनी वशमा ॥५९
पपिहा त्वांहिका मारिहौं छोड़ देहु ममगाँव
अर्द्धरात को बोलते लै लै पिउको नाँव
लै लै पिउको नाँव ठांव हमरो नहिं छोंड़ै
कठिन तुम्हारो बोल जाइ हिरदे में शूलै
कह गिरिधर कविराय सुनो हो निर्दय पपिहा
नेकु रहनदे मोहिं चोच मूंदे रहु घटिहा ॥६०
करै कियारि कपूरकी मृगमद वरहा बन्ध
सींचै केवरा गुलावसे लहसुन तजै नगन्ध ।
लहसुन तजै न गन्ध रुद्र अगर संयूता ।
कवहुँ अहै गजराज कबहुँ शूकरकेपूता ।
कह गिरिधर कविराय वेद भाषै यह सारी
बीज बयो सो होय कहाकरै उत्तमक्यारी ॥६१।
लंकापति तुमसे गई ज्यों बसन्त द्रुमपात ।

ुमति विभीषण ज्यो दई तव तुम मारीलात ॥
व तुम मारी लात भाइ तवहींते आयो ।
मेल्यो राम दल जाइ काज धौ केतिक सारयो ॥
कहगिरिधर कविराय रामजिय बाढ़ी शंका ।
ापै विभीषण राज अरे पति छूटीलंका ॥ ६२ ॥
ड़े वड़ेनकी ऐसेही वड़ेन वड़ाई होय ।
ानूमान जब गिरिधरेउ गिरिधर कहत न कोय ॥
गेरिधर कहत न कोय ताको किनका हरिधरेऊ ।
गेरिधर गिरिधरहोय कहत सवको दुख हरेऊ ॥
कहगिरिधर कविराय सुनोहो ज्ञानी भाई ।
ोरेमें यशहोय यशी पूरुषको सांई ॥ ६३ ॥
ाई इन्हें न विरोधिये छोट वड़ो सब भाय ।
ासे भारी वृक्षको कुल्हरी देत गिराय ॥
ुल्हरी देत गिराय मारके जमीं गिराई ॥
कटूकके काटि समुद्रमें देत वहाई ॥
ह गिरिधर कविराय फूट जेहिके घर जाई ॥

हरणाकश्यप कंसगये बलि रावणभाई ॥ ६४
लाठी में गुण बहुतहैं सदा राखिये संग
गहिरी नदि नारा जहां तहां बचावै अंग
तहां बचावै अंग झपटि कुत्ता कहँ मारै
दुश्मन दावागीर होय तिनहूंको झारै
कह गिरिधर कविराय सुनो हो धूरके बाठी
सब हाथियारन छांड़ि हाथ महँ लीजैलाठी ॥६५
कमरी थोरे दामकी आवै बहुतै काम
खासा मलमल वाफता उनकर राखैमान
उनकर राखै मान बुन्द जहँ आड़े आवै
बकुचा बांधै मोट रातको झारि बिछावै
कह गिरिधर कविराय मिलतिहै थोरे दमरी
सब दिस राखै साथबड़ी मर्यादा कमरी ॥ ६६
जुगुनू बोलै सूर्यसो तू हम बिन जग अँधियार
दिनके ठाकुर तुम भये रातके हम कोतवार
रातके हम कोतवार जुगुनू असनाम ९

तुम अकाशमें रहौ हमारो पृथ्वी द्वारो ॥
कह गिरिधर कविराय सुनोहो मनकेमगनू ।
ऐंड़िऐंड़ि वतलाहि सूर्यके सन्मुख जुगनू ॥६७॥
बिना विचारे जो करै सो पीछे पछिताय ।
काम बिगारै आपनो जगमे होत हँसाय ॥
जगमें होत हँसाय चित्तमे चैन न पावै ।
खानपान सन्मान राग रँग मनहिं न भावै ॥
कह गिरिधर कबिराय दुःख कछु टरत न टारे ।
खटकत है जिय माहिं कियो जो विना विचारे६८
बीती ताहि बिसारिदे आगे की सुधि लेइ ।
जो वनिआवै सहजमें ताहीमे चित्त देइ ॥
ताहीमे चितदेइ वात जोई वनिआवै ।
दुर्ज्जन हँसै न कोइ चित्तमे खता न पावै ॥
कह गिरिधर कविराय यहै करु मन परतीती ।
आगेको सुखसमुझि होइ वीती सो वीती ॥ ६९॥
साई अपने चित्तकी भूलि न कहिये कोइ ।

तबलग मनमें राखिये जब लग कारज होइ ॥
जबलग कारज होइ भूलि कबहूँ नहिं कहिये ।
दुर्ज्जन हँसै नकोय आप सियरेह्वैरहिये ।
कह गिरिधर कविराय बात चतुरनकीताई ।
करतूती कहिदेत आप कहिये नहिं साईं ॥७०॥
साईं अपने भ्रात को कबहुँ न दीजै त्रास ।
पलकदूर नहिं कीजिये सदा राखिये पास ॥
सदा राखिये पास त्रास कबहूं नहिं दीजै ।
त्रासदियो लंकेश ताहि की गति सुनिलीजै ॥
कहगिरिधर कविराय रामसों मिलि यो जाई ।
पाय विभीषण राज्य लंकपति बाज्यो सांईं॥७१॥
साईं नदी समुद्रको मिली बड़प्पनजानि ।
जातिनाशभयोमिलतही मान महतकीहानि ॥
मान महतकीहानि कहो अब कैसी कीजै ।
जलखारीह्वै गयो ताहि कहो कैसे पीजै ॥
कहगिरिधर कविराय कच्छ औ मच्छ सकुचाई ।

वड़ीफजीहतहोय तबौ नदियनकी साई ॥ ७२ ॥
सांई सन अरु दुष्टजन इनको यहै सुभाव ।
खाल खिचावैं आपनी परवन्धन के दांव ॥
परवन्धनके दांव खाल अपनी खिचवावे ।
मूडकाटिकैफवै तऊ वह वाज न आवे ॥
कहँ गिरिधर कविराय जरै आपनी कटाई ।
जलमे परि सरगये तऊ छांड़ी न खुटाई ॥ ७३॥
साई समय न चूकिये यथा शक्तिसन्मान ।
काजाने को आइहै तेरी पौरि प्रमान ॥
तेरी पौरि प्रमाण समय असमय तकि आवे ।
ताको तू मन खोलि अंक भरि हृदय लगावै ॥
कह गिरिधर कविराय समैयामे सुधि आई ।
शीतल जल फल फूल समयजानि चूकोसाई७४॥
साई ऐसी हरि करी बलिके द्वारे जाय ।
पहिले हाथ पसारिकै वहुरि पसारे पॉय ॥
बहुरि पसारे पायँ मतो राजाने वतायो ।

भूमिसवै हरिलई बांधि पाताल पठायो ।
कहगिरिधर कविराय राउ राजनके ताईं
छल वल करि प्रभुमिले ताहिको तृष्टे साईं॥७५।
साईं अगर उजार में जरत महा पछिताय ।
गुणगाहक कोऊ नहीं जाहि सुवास सुहाय ।
जाहि सुवास सुहाय सूनवन कोऊ नाहीं ।
कै गीदर कै हिरन सुतौ कछु जानत नाहीं ।
कहगिरिधर कविराय वड़ादुखयहै गुसाईं
अगर आककी राख भई मिलि एकै साईं ॥ ७६
साईं हंस न आवही विनुजल सरवरपास
निर्जल सरवर ते डरैं पक्षी पथिक उदास
पक्षी पथिक उदास छांह विश्राम न पावें
जहां न प्रफुलित कमल भवॅर तहँ भूलि न आवें
कह गिरिधर कविराय जहां यह बूझि वड़ाई
तहां न करिये सांझ प्रातही चलियेसांई ॥ ७७
नयना जब परवश भये उत्तम गुण सवजायँ

फिरि फिरि चोरी करैं ये फिरि फिरि लपटायँ॥
फिरि फिरि लपटायँ नेत्र बहुरैं भरिआवैं ।
न पान तनुत्याग रात दिनहीं दुखपावैं ॥
ह गिरिधर कविराय सुनो तुम श्रवणनि बैना ।
ग देईं अकलंक परैं जब परवश नैना ॥ ७८ ॥
ाईं सुमनपलाश पर सुवा रह्यो जो आय ।
ालकलीसी चोचपर मधुकर बैठोजाय ॥
धुकर बैठोजाय सुवा तत्काल बचायो ।
ोटि कष्ट करि पाँय मारि करि छूटन पायो ॥
हि-गिरिधर कविराय वेगि घर बजै बधाई ।
ीजै विदा पलाश जियत घर जैये साईं ॥ ७९ ॥
ाईं तेली तिलन सों कियो नेह निर्वाह ।
ानि फटक ऊजर करी दई बड़ाई ताह ॥
ई बड़ाई ताह पञ्चमहँ सिगरेजानी ।
ई कोल्हूमें पेरि करी येकत्तर घानी ॥
कह गिरिधर कविराय यही माया प्रभुताई ।

घास बेंचिकै खात हैं भयो गांव में रोग।
भयो गांव मे रोग पूंछ नीवरी देखावहु
मनमें बड़ेहो छेल राग पनघट पर गावहु।
कह गिरिधर कविराय हीन तुमते हैचूही
भये सिपाही आनि बांधिकै पगड़ी सूही॥ ८६
पानी बाढ़ो नावमे घरमें बाढ़ो दाम
दोनों हाथ उलीचिये यही सयानोकाम।
यही सयानो काम रामको सुमिरण कीजै
परस्वारथ के काज शीश आगे धरिदीजै
कह गिरिधर कविराय बड़ेनकी याही बानी
चलिये चाल सुचाल राखिये अपनो पानी॥८७
राजा के दरबार मे जैये समया पाय
साईं तहाँ न बैठिये जहँ कोउदेय उठाय
जहँ कोउ देय उठाय बोल अनबोले रहिये
हँसिये ना हहराय बात पूंछेते कहिये
कह गिरिधर कविराय समय सों कीजै काजा

ाति आतुर नहिंहोय बहुरि अनखैहैं राजा॥८८॥
ृतघन कबहूं न मानहीं कोटि करै जो कोय ।
विंस आगे राखिये तऊ न अपनो होय ॥
ाऊ न अपनो होय भलेकी भली न मानै ।
ामकाढ़ि चुपरहै फेरि तिहि नहिं पहिचानै ॥
ह गिरिधरकविराय रहत नितही निर्भयमन ।
ित्र शत्रुना एक दामके लालच कृतघन ॥ ८९॥
ोनरायण निरामय कारन कारण रहत ।
िंधसंज्ञा जात पुनि गुण क्रिया असहत ॥
ुण क्रिया असहत कल्पना सर्व अतीता ।
ेति नेति करके भई चकृत सुरती गीता ॥
ह गिरिधर कविराय नजामे सत रज तमो ।
ेरावर्ण इक दाट आपकूं आपे नमो ॥ ९० ॥
ािरिधर सो जो गिरिधरे प्रयत्न शून्य बिन खेद ।
ािरि कारण सूक्ष्म स्थूलतन गिरिधर प्रत्यक वेद॥
ािरिधर प्रत्यक वेद जोहै नितहीं प्रापत ।

विना श्रोत्रध्वनि सुने वाक बिन शब्द अलापत॥
कह गिरिधर कविराय जासमे नहीं मित्रअर।
सबको आपन आप आतमा सों तू गिरिधर९१॥
बानी मात्र जगत सब चिद वितरेक न रंच
ज्यो म्रद सत्य घट मिथ्यया त्यों कलपत
त्यो कलपत परपंच तंतुमें जैसे वस्तर
कनक माहि आभरन लोहमे जैसे शस्तर
कह गिरिधर कविराय द्वैतकी धूरि उड़ानी
मनकी जहां न गम्य विपय करि सके नबानी ९
बानी विपय न करिसकै मनकी जहां न गम्य
सो परमेश्वर ब्रह्महै ऐसो लियो मरम्य
ऐसो लियो मरम्य अपनपो आप निहार्यो
मोह संशय विपरीत भ्रांतिको मूल उखार्यो।
कह गिरिधर कविराय विलोवो काहे पानी
मनकी जहां नगम्य विपय करि सकै न बानी९
आत्म भिन्न जो जो क्रिया सो सो भ्रमको मूल

कायिक वाचिक मानसी सवी आपनी भूल ॥
सवी आपनी भूल मोक्षहित करे जुकरनी।
ज्यों रविचाहै तेज जाय खद्योतकी शरनी ॥
कह गिरिधर कवि पुरुप साध्य सो सवी अनातम।
स्वतः सिद्ध अपवर्ग रूप चितघन तू आतम ९४
खल साजनदो जगतमें तिनकीहै यह रीत ।
ज्यो सूचीको अग्र भाग पृष्ठभाग है मीत ॥
पृष्ठभाग है मीत एकतो छिद्दर करिहै ।
दूसर [illegible] गुन करि भरिहै ॥
[illegible] एकाहि अमल ।
निज [illegible] ९५॥
[illegible] ५ ।
[illegible] ॥
[illegible] ।

किन संग करैं विवाद बादजो है इकचिद् ॥९६॥
राम तूहि तुहि कृष्णहै तुहि देवनको देव
तुहि ब्रह्मा शिव शक्तितू तुहि सेवक तुहि सेव ।
तुहि सेवक तुहि सेव तुही इंदर तुहि शेषा
तुहींहोय सब रूप कियो सबमें परवेसा ॥
कह गिरिधर कविराय पुरुप तुहि तूही बाम
तुहि लछमन तुहि भरत शत्रुहन सीताराम॥९७
बेड़ा तू दरियाव तू तूहि वार तुहि पार
तुही तरावे तरेतू तुहि मधडूवनहार
तुहि मधडूबनहार सर्व लीलाहै तेरी
तुहि घंटा तुहि शंख तुही रणसिंहा भेरी
कहगिरिधर कविराय तुही वस्ती तुहि खेडा
तुहि नावक तुहि नीर तुही पतवारीबेड़ा॥ ९८ ।
भूल्यो जब तू आपको तबहीं भयो खराब
रेकाअस्पदभयो उतरगई सब आब ।
उतरगई सब , दरोदर खावैधक्के

गवैकवी केदारखंड पुनि जावै मक्के ॥
कहगिरिधरकविराय कुफरके पलनेझूल्यो ।
चकनेलग्यो तुफान जमा सब अपनी भूल्यो९९॥
कोपकरै जिस शख्सपर परमेश्वर जब आप ।
लोकन साथ मिलाप पुनि चाहै दिन अरु रात ॥
चाहै दिन अरु रात बासना उपजै खोटी ।
कृपणताकेलिये बुद्धि होजावै मोटी ॥
कह गिरिधर कविराय आपनो करिकै लोप ।
अनातम चिंतनकरै यही ईश्वरको कोप ॥ १००॥
करै कृपा जिस पुरुप पर अतिशय करिकै राम ।
ताको कोई ना फुरै लौकिक वैदिक काम ॥
लौकिक वैदिक काम रहै नहिं करनो बाकी ।
हर जगा हर बखत ब्रह्म की होवै झाकी ॥
कह गिरिधर कविराय अविद्याजिसकी मरै ।
सर्व क्रिया के माहिं एक खुद दरशन करै ॥१०१
भाग्य सर्वत्र फलतहै नच विद्या पौरुपसरल ।

हरि हर मिल सागर मथ्यो हरको मिल्यो गरल॥
हरको मिल्यो गरल हरीने लक्ष्मी पाई ।
षट भग दो संपन्न भागकी कही न जाई ॥
कह गिरिधर कविराय कोउ मिल खेलैं फाग ।
कोउ हमेसारोवैं आयो अपने भाग ॥ १०२ ॥
दैवनाम है भागका सो है जिसकासूर
ताकी हानी करनको है किसका मकदूर ॥
है किसका मकदूर आप विधि विष्णु महेसू ।
वाकीरक्षा करैं भवानी सहित गणेशू ॥
कह गिरिधर कविराय भैरवी शक्ती सैव ।
इक रोम नसकै उखार दाहने जब तक दैव १०३
दैव आधीन व्यवहार सब अन्य अधीनतु वीर ।
अन्य अधीन जु होयकोइ, पीवन देत ननीर ॥
पीवन देत न नीर तोयमें देत न नहावन ।
पावक देत न तपन पवन पुनि देत न पावन ॥
कह गिरिधर कविराय आत्मा इक निरवैव ।

उभय अविद्या सहित अरोपत जिसमें दैव॥१०४
अदृष्ट समान वलिष्ट नहि देख्यो जगमे मीत ।
करै भगोड़ा सूरको पुनि कायरकी जीत ॥
पुनि कायरकी जीत धनीको करहै कँगला ।
निर्धनको करै धनी शहर करिडारै जँगला ॥
कहगिरिधर कविराय इष्टको करै अनिष्ट ।
पुनि अनिष्टको इष्ट ऐसो कौन अदृष्ट ॥ १०५ ॥
अवश्य मेव भुक्तव्यहै कृतकर्म शुभाशुभ जोय ।
ज्ञानी हँस करि भोगहै अज्ञानी भोगै रोय ॥
अज्ञानी भोगै रोय पुनः पुनि मस्तक कूटै ।
प्रारब्ध जो होय विना भोगे नहि छूटै ॥
कह गिरिधर कविराय नदीरघ होत रहस्य ।
जैसे जैसे भाग पुरुषके फलै अवश्य ॥ १०६ ॥
थोरे दिनके कारणे कवन उपाधि करै ।
किस जीवनके वास्ते जगमे पचि पचिमरै ॥
जगमे पचि पचि मरै आपनी लज्जत खोवै ।

एक गमावै हुरमत द्वितीय फजीहत होवै ।
कह गिरिधर कविराय जुजीवन मुक्ती लोरै
तजैसर्वका संग जान रहना दिन थोरै ॥ १०७ ।
देखदेख गुण जनोके मनमें उपजी शांति
मिलवेको चितना चहै किंतु मिटगई भ्रांति ।
किंतु मिट गई भ्रांति साथ सब गये संदेह
किन संग करिये वैर कौन सँग लाइये नेह ।
कह गिरिधर कविराय वहमकी रही न रेख
ज्योंकी त्योजव वस्तु यथारथ लीनी देख १०८॥
जो सँग आश्रम वरनके ना जा तिनके कोल ।
जाये तो मत बैठतहँ बैठे तो मत बोल ॥
बैठे तो मत बोल बोलै तो छोर विषेरो ।
वह पूछैं कछु व्यवहार थोरमे करो निनेरो ॥
कह गिरिधर कविराय कहै मत तिनके लगजो ।
नाजा तिनके कोल वरन आश्रम के सँगजो१०९
कूकर पागल कटै जिस वह पागल है तात ।

त्यों नर मजवी संगते नरमजवी होजात ॥
नर मजवी होजात वात हिरदेधरि लीजे।
प्राण जायँतो जॉय न मजवीका संग कीजे ॥
कह गिरिधर कविराय अधमहै सबसे शूकर ॥
ताते भीसो अधम मजवका जो जो कूकर११०॥
फॉसी जव लग मजहवकी तव लग होत न ज्ञान।
मजहव फॉसी टूटै जवै पावै पद निर्वान ॥
पावै पद निर्वान निरंजन माँहि समावै।
जनम मरन भव चक्र विपे फिर योनि न आवै ॥
कह गिरिधर कविराय वोध विन भ्रमै चौरासी।
तव लग होत न ज्ञान मजहवकी जवलग फॉसी॥
गडै अविद्याने रचे हाथी डूव अनंत।
जोउगिऱ्यौ जिस खातमें धँसगयो कान प्रयंत ॥
धँसगयो कान प्रयंत आपको सुनै न देपै।
वहिरो अँधरो भयो दशो दिशि तम इक पेपै ॥
कह गिरिधर कविराय यद्यपि शास्त्र स्मृतिपडै।

तिसी तिसीमें मगन गिन्योहै जिस जिस गडै॥११२
जानीरे मन चंचला सब तेरी करतूत।
तू मखोलसे नाटरै घसै ऊतके ऊत।
घसै ऊतके ऊत बड़ो तूहै परपंची
कतरब्योंताकरै सर्वथा विन गज कंची।
कह गिरिधर कविराय छनक में हांवै ध्यानी।
छिनमें रचै धमाल रीति तेरी सब जानी॥ ११३॥
जैसा यह मन भूतहै और न दुतियवताल।
छिनमे चढै अकास को छिनमें धसै पताल॥
छिनमें धसै पताल होत छिनमें कम ज़ादा।
छिनमे शहर निवास करै छिन वनका रादा॥
कह गिरिधर बिनज्ञान चित्त थिर होत न ऐसा।
गुरू अनुग्रह विना बोध दृढ़ होत न जैसा॥११४॥
दूजी चरचा ना करै बिना एक धिष्ठान।
नीमपातकूं नाचितै चाख्यो जिन मिष्ठान॥
चाख्यो जिन मिष्टान नखावै कटू तुरैया।

अमृत भक्षण करै उदगारन लेत मुरैया ॥
कह गिरिधर कविराय अभिमानी पाजी मूजी ।
आतम विद्या छोर रागनी गावै दूजी ॥ ११५ ॥
कीजै ऐसी कथा मत निष्फल कथनी जोय ।
सिद्ध न जिसमें अर्थकी नहिं परमारथ होय ॥
नहि परमारथ होय वार्ता सो सब तजिये ।
राम कृष्ण नारायण गोविंद हरि हर भजिये ॥
कह गिरिधर कविराय सुधा अनुभवरस पीजै ।
आतम अरु संधान होय सो चरचा कीजै॥११६॥
हानी नाहित तज्ञकी होवत अनू समान ।
चौरासी लख जीव मिल जेकर बकै तुफान ॥
जेकर बकै तुफान नवल कछु पाछे राखै ।
जो जो कहनो नाहिं सोइसो पुनि पुनि भाषै ॥
कह गिरिधर कवि तपै भानु अरु बरसै पानी ।
चलै पवन अत्यंत व्योम की जथा नहानी॥११७
घाटो बाधो नारह्यो गईजीत पुनि हार ।

तजके जन समुदाय देश निरजनमें रहणौं॥१२८।
बहता पानी निर्मला षडागंध सो होय
त्यों साधूरमता भला दाग न लागे कोय।
दाग न लागे कोय जगतमे रहै अलेदा
राग द्वेष युग प्रेत न चित को करै विछेदा ।
कह गिरिधर कविराय शीत उष्णादिक सहता
होइ न कहुँ आसक्त यथा गंगाजल बहता १२९।
एका एकी सिद्ध पुनि सिध साधक दोइ मुनीश
तीन चार कुटुम्ब सम लस्कर हैं दश बीश ।
लस्कर हैं दश बीश तहां नाना विधि झगड़ो ।
सदा रहै विक्षेप जुमेरी तेरी रगड़ो ॥
कह गिरिधर कविराय पुरुष जो परम विवेकी ।
करके सबको त्याग सुविचरे एकाएकी ॥ १३०॥
मनकी मेटै दीनता करै वासना नाश ।
प्रत्यक ब्रह्म अभिन्नका पुनि पुनि बोध प्रकाश ॥
पुनि बोध प्रकाश विषेकी ममता जारै ।

लोक ईपणा आदि कामना सकल निवारै ॥
कह गिरिधर कविराय त्याग अहंता तनकी ।
तत्त्वज्ञान उपदेश दुष्टता हरही मनकी ॥१३१॥
मनरे मंदी बात छद गंधा तज हंकार ।
ज्ञान धनुष उरमे ग्रहो करहं ब्रह्म टंकार ॥
करहं ब्रह्म टंकार जरा तू पग धर आगे ।
भर्म जो पंच प्रकार हृदय सों ततछन भागे ॥
कह गिरिधर कविराय मूल संसारका खनरे ।
नष्ट होय अज्ञान द्वैत फिर रहै न मनरे ॥१३२॥
देही सदा अरोगहै देह रोगमयचीन ।
यह निश्चय परिपक जिसू सोइ चतुर परवीन ॥
सोइ चतुर परवीन विवेकी सो है पंडित ।
करे अत्यंत नरसन आतमा लखे अखंडित ॥
कह गिरिधर कविराय आपना आप सनेही ।
परमानंद स्वरूप और नहिं एहे देही ॥ १३३ ॥
अत्यंत मलिन यह देहहै देही अतिशय शुद्ध ।

उभय सु अंतर जानिये कस शौच करे की वुद्ध॥
कस शौच करेकी वुद्ध भेद निश्चय किय जवहीं।
विमल काल ते विमल मलिन शुध होइ न कवहीं॥
कह गिरिधर कविराय जहां लगि शास्त्रसंत।
सवका यहि सिद्धांत शरीर असार अतंत॥१३४॥
शरीरी सकल शरीरमे व्यापक नभवत एक।
स्थावर जंगम तन जते हैं परिछिन्न अनेक॥
हैं परिछिन्न अनेक द्रव्य जड़रूप विकारी।
द्रष्टा चेतन नित्य आत्मा अव्यभिचारी॥
कह गिरिधर कविराय मिटे तव सव दिलगीरी।
जव निश्चय साक्षात् होत अपरोक्ष शरीरी॥१३५॥
कारण सूक्षम स्थूलते जान्यो अहं अतीत।
क्या कर सकहीं द्वंद्वतिस भौतिक उष्ण रु शीत॥
भौतिक उष्ण रु शीतलगत है व्याकृत तनको।
तिनकरि राग रु द्वेष सु होवत लौकिक मनको॥
० गिरिधर कविराय दुःख सुख विना विचारन।

आतम सबते परे जु कल्पित कारज कारण१२६
अमर नाथ इक आतमा सब देवनको देव ।
कोटिन मध्ये संतजन जानत है कोउ भेव ॥
जानतहैं कोउ भेव विवेकी पुरुष अकामी ।
अनुगत अंतर बाज व्योमवत अंतरजामी ॥
कह गिरिधर कविराय बिना अवेवजुअमर ।
इंद्रिय गणको नाथ आत्मा सोतू अमर१२७
नारायण यह आपहै स्वप्रकाश विज्ञान ।
निजस्वरूपको भूलवो है कल्पित अज्ञान ॥
है कल्पित अज्ञान नाना विध नाच नचावै ।
घटी यंत्र ज्यो उर्ध अर्ध इत उत भरमावै ॥
कह गिरिधर कविराय पीवै जब ज्ञान रसायन ।
स्वप्रकाश विज्ञान आपको विषे नरायन॥१२८॥
स्वतः परमेश्वर आपहै बन्यो चहै कछु और ।
अविदिक सांधन मे लग्यो मूढनको शिरमौर ॥
मूढनको शिरमौर आपको आपन जानै ।

श्रुति स्मृती पुराण शास्त्र का कहा न मानै ॥
कह गिरिधर कविराय भ्रमै इतको क्षण उतै ।
वन्यो चहै कछु और परमेश्वर आपहै स्वतै, १३९
प्रतीचा जो सब जगतका कहूं विचार कर कवन।
जामें है स्थित लोकत्रय सहित चतुरदश भवन ॥
सहित चतुरदश भवन नाहै नाहुइ नाहुये ॥
ज्यों वंध्याका पूत न उतपन भये न मुये ॥
कह गिरिधर कविराय द्रश्य मृगजलको कीचा ।
तामें जाइ ध्यायो आप हुइके प्रतीचा ॥ १४० ॥
अच बिन जैसे वरनको होवत नाहिं उचार ।
त्यों अस्ती भाती प्रिय बिना सिद्ध नहुइ व्यवहार॥
सिद्ध नहुइ व्यवहार मानसी वाचक कायक ।
सनस फुरण सुदरजन जब लग होत सहायक ॥
कह गिरिधर कविराय रहे बहु स्याने पचपच ।
होवत नाहिं उचार वरन को जैसे बिन अच१४१
१। अक्षर यथा व्यंजन होत मुरदार ।

त्यों सत चिद आनंद विन होत प्रपंच असार ॥
होत प्रपंच असार जहां लग कारन कारज ।
जड़ अनित्य दुख रूप वेद वित कहत अचारज ॥
कह गिरिधर कविराय सोइ तू अनुगत पुर पुर ।
यथा रागनी तान ग्राम मुरछनमे इकसुर ॥ १४२ ॥
द्रष्टाचिद द्रश्यवर्गको पुनि द्रश्यमे अनुसूत ।
जनअध्यस्त तामें सबै यावत भौतिक भूत ॥
यावत भौतिक भूत अरोपित रज्जुसर्पवत ।
भ्रम कर सिद्ध प्रसिद्ध अनातम रूप असत सत ॥
कहगिरिधर कविराय आतमा तू इसमष्टा ।
कलनारहित अशून्य जुचेतन द्रश्यको द्रष्टा १४३
अत्ता जो सब जगतको सो भूमाधिष्ठान ।
सोईप्रत्यक आतमा सोइ ब्रह्म भगवान ॥
सोइ ब्रह्म भगवान सच्चिदानंद विश्वेश्वर ।
त्रिधा भेद परिछेद रहित अमीत परमेश्वर ॥
कह गिरिधर कविराय एक रस जिसकी सत्ता ।

सो तूई साक्षात प्रत्यक ब्रह्मंडको अत्ता ॥ १४४ ।
त्याग जीवता जीवकी ईश्वरको ईश्वरत्व
दोनोको धिष्ठानजो सो निश्चय करतत्व ।
सो निश्चय करतत्त्व वस्तु गत भेद न जामें
समष्टि व्याष्टि सर्वज्ञता अल्पज्ञता अरोपित तामे ॥
कह गिरिधर कविराय मोह निद्रासे जाग
ईश्वरकी ईश्वरता जीवकी जीवता त्याग ॥ १४५ ॥
क्षुधा प्राणको धर्म है शीत उष्ण तनु धर्म
आतमसदा असंग है ज्ञानी जानै मर्म ।
ज्ञानी जानै मर्म और नहिं जानै कोई
के जानै जिज्ञासु मुक्तपद चाहत जोई ॥
कह गिरिधर कविराय ज्ञान जब पीवे सुधा ।
तब निरसंशय पिये प्राणको धर्म हैं क्षुधा ॥ १४६ ॥
स्याने सेई आखिये जिनकी स्यानप एह ।
भिन्न भिन्न करिकै लखै यह देही यह देह ॥
यह देही यह देह विषे युग न्यारे न्यारे ।

प्रमाणो जुगतो करिके विवकारूपनिहारे ॥
कह गिरिधर कविराय और सब निपट इजाने ।
जिनको आतमद्रष्ट वही हैं पुरुष सयाने ॥१४७॥
संसारी इन जननते किने न पायो चैन ।
इक रस निर्छल कपटविन कबू न बोलत बैन ॥
कबू न बोलत बैन भनत प्रथम छिन आरय ।
उसी तुंडसे दूसर छिनमे वदत अनारय ॥
कह गिरिधर कविराय किया चाहे अनुसारी ।
ऋषि मानव देव गंधर्व यक्ष जेते संसारी ॥१४८॥
ढीली भक्ती देखके होवत संत उदास ।
भावहीनके गृहविषे करै न दंड निवास ॥
करै न दंड निवास चीनकर श्रद्धा बोदी ।
करै उपेक्षा तिनकी जो अश्रद्धक मोदी ॥
कह गिरिधर कविराय प्रीति जहँ परम रसीली ।
तहां चार दिन टिकै न चाहे सेवा ढीली ॥१४९॥
छोटा जिय हत्या बड़ी अलप लाभ बहु खेद ।

सो ना पडैं प्रवृत्तिमे जिन जान्यो यहभेद ॥
जिन जान्यो यह भेद नहीं वह छानत भूसा ।
खोदै महा पहाड़ मिले इक लगुसा मूसा ॥
कह गिरिधर कविराय जान्यो जिन मारग खोटा ।
सोना तिसमें चलै चलै सोमत का छोटा ॥ १५० ॥
पंगत तजी प्रवृत्तिकी छोड़ी जात जमात ।
फारखती सबसे लही, परमेश्वर की दात ॥
परमेश्वर की दात भाग जिसकेसो पावै ।
भाग्यहीनको ईश मिले तौ शांति न आवै ॥
कह गिरिधर कविराय डार दुष्टनकी संगत ।
वीतराग मन भयो कौनकी चाहे पंगत ॥१५१॥
बैल भूल विधि नर रचे लादे दाढी मूँछ ।
अकल वही हैवान की बिना शृंग बिन पूँछ ॥
बिनाशृंग बिन पूँछ और तो पशुकी रहनी ।
भय मैथुन आहार निद्रा पुनि सुननी कहनी ॥
कह गिरिधर कविराय चलेना सूधीगैल ।

खाल आदमी दीले पहरी है तावैल ॥ १५२ ॥
बाहर जो अंतर सुही आगे पाछे एक ।
जो ना समझे बात यह ताके पिता अनेक ॥
ताके पिता अनेक तथा जानो तिसमाता ।
जहां जहां वह जाइ तहां तहां लहै असाता ॥
कह गिरिधर कविराय एक चिद वातन जाहर ।
सोइ ऊरध सोइ अरध सोई पुनि अंतर बाहर १५३
यारी ता सँग कीजिये गहै हाथसो हाथ ।
दुख सुख संपति विपति मे छिन भर तजे न साथ ॥
छिन भर तजै न साथ महत दृष्टांत बखानौं ।
ज्यो अकास सँग पोल और इक सुनो बखानो ॥
कह गिरिधर कविराय निमकमें ज्यो रस खारी ।
या प्रकार जो व्यापक तासँग लइये यारी ॥१५४
साईलोक पुकारदे रेमन होतू रिंद ।
यह यकीन दिलमेंधरो मै सबको खाविंद ॥
मे सबको खाविंद एक खालक हक़ताला ।

खिलकतकी फना हिर हो हरसें परवाला
कह गिरिधर कविराय आपना दुखी दुखाई
मन खुदाइ लाजिसम बांग हरदम देसांई १५५।
द्रष्टा दृश्य न होतहै द्रश्य न द्रष्टा होइ
द्रष्टाने जब आपको द्रश्यरूप कर जोइ।
द्रश्य रूप करजोइ इसीते भयो कुचैनी
मान्यो निजको शैव शाकत वैष्णव जैनी
कह गिरिधर कविराय सहे नाना विधि कष्टा
भ्रांति कूपके माहिं पर्‍यो जिस दिनसे द्रष्टा१५६
एक फकीरी लाभ जब दूसर ज्ञान अथाह
उभै रतन ढिग जिनहिके तिनको क्या परवाह।
तिनको क्या परवाह वस्तु जिसपास अमोलक
कौन तिन्होंको कमी अटूट धन जिनगर गोलक।
कह गिरिधर कविराय भ्रांति जिन दीनी छेक
सोक्यो होवे दीन ब्रह्म ब्रत जिनके एक ॥ १५७।
लोड रहीना अर्थकी नहिं परमारथ भ्रांत

कौन वस्तु के वास्ते फिरे निकासत दांत ॥
फिरे निकासत दांत तभी जब होइ अपेष्या।
विना प्रयोजन कोइ प्रवृत्तना काहूं देष्या ॥
कह गिरिधर कविराय फकीरी अपनीवोर।
प्रमादी ढिग तबजावै जब कछुहोवै लोर॥१५८॥
आवे तो अटकाउ नहिं जातेको नहि रोक ।
इस लौकिक व्यवहारमे हर्ष शोक नाहिं टोक ॥
हर्ष शोक नहि टोक नहीं खा इसइक मासा ।
फकीरी करनी लगी जबै फिर किसकी आसा ॥
कह गिरिधर कविराय कोइ रोवै कोइ गावै ।
नहीं किसी सों काम भावे आवै जिन आवै १५९
रोटी चारों वरणकी पावत हैलाधरक ।
कुत्सित मारग छोड़के चालै सूधी सरक ॥
चालै सूधी सरक न मनमे राखै धरका ।
तिनमे करै विकल्प जोउसो पामर लरका ॥

कह गिरिधर कविराय किसीकी सुने न खोटी
नाकाहूकी कहै भ्रांतितजि मांगत रोटी ॥१६०॥
जंगलमे मंगल तुझे जो तू होवै फकर
खिदमत तेरी सब करैं दिलके छांड़े मकर ।
दिलके छांडै मकर फकीरी का रँगलागै
मूल सहित संसार रोग सगरो भ्रम भागै ।
कह गिरिधर कविराय कुफरकी तोरो संगल
जहँ इच्छा तहँ रहो नगर वा अथवा जंगल १६१
भोजन छाजन नीरकी करै सुचिंता मूढ़ ।
ज्ञानी चिंता ना करैं निज पदमाहिं अरूढ़ ॥
निज पदमाहिं अरूढ़ तिनोको चिंता कैसी ।
तिसहीमे आनंद अवस्था प्रापत जैसी ॥
कह गिरिधर कविराय औरना रखै प्रयोजन ।
आतम चिंतन करै अदृष्ट पहुँचावत भोजन १६२
देणी दमरी एकना लेणे को न छिदाम ।
गांठ बांध नहिं चालते फूटी एक बदाम ॥

फूटी एक बदाम नराखै धूसर दिनको ।
बिना आपने आप भरोसा और न जिनको ॥
कह गिरिधर कविराय रहीना बाकी लेणी ।
कीनो जबी हिसाब न निकसी कौडी देणी॥१६३॥
पोथी पाना फेकके विचरो है निहकाम ।
आतम अरु संधानकर दिलमे रहै अराम ॥
दिलमे रहै अराम और कछु फुरे न संका ।
अहंब्रह्म परिपूरण निशि दिन बाजै डंका ॥
कह गिरिधर कविराय द्रश्य तुझबिन सब थोथी।
तू सबको धिष्ठान आरोपित जिसमे पोथी॥१६४
जानो नहिं जिस गाममे कहा बूझनो नाम ।
तिन शखसनकी क्याकथा,जिनसों नहिं कछु काम
जिनसों नहिं कछु काम करै जो उनकी चरचा ।
राग द्वेष पुनि क्रोध बोधमे तिनका परचा ॥
कह गिरिधर कविराय होइ जिन सँगलिखानो ।
बाकी पूँछो जात वरन कुलहै क्याजानो॥१६५॥

नाहीं ससुर जमात्रि नहिं सेवक सेव्यसबंध।
तास क्रिया पिख जोररे सोमूरख जड़ अंध॥
सोमूरख जड़ अंध अंधको है बहु चेरो।
विना प्रयोजन अहमक जहँ तहँ करै बिखेरो॥
कह गिरिधर कविराय किसीको कहिये काहीं।
जो होवै कछु निसबत सोतो सुपने नाहीं १६६॥
जासुहानिसे लाभ नाहिं जासु लाभ नहिं हान।
ताकी चरचा जो करै, सोबेकूफनिदान॥
सोबेकूफ निदान पऱ्यो मत्सरकी खाई।
नहीं जोर नहिं जुलम है अकल की कमताई॥
कह गिरिधर कविराय नबैठो तिनके पास।
वर करै निर्वैर नाल खोटी बुध ज्यासा॥१६७॥
कीयो चाहै कामको परे तासमें देर।
पुना विपर्यय होइसो यहि अदृष्टको फेर।
यहि अदृष्टको फेर कर्म ग्रह टरे नटाऱ्यो
... प्रारब्ध और विध मरे न माऱ्यो।

कह गिरिधर कविराय जुपूरवदीयो लीयो।
सोसो भोगत पुरुष दुःखसुख अपनो कीयो १६८।
होनी होइ सो ना मिटै अनहोनी नाहोइ ।
ऐसो निश्चय जिनाहिको, मानव कहिये सोइ ॥
मानव कहिये सोइ और तो सबही पोये ।
अल्प बातको समझत नहिं निज गुरुके खोये ॥
कह गिरिधर कवि जान्यो जिसने एक अजोनी ।
जिसकी है सबलीला जो अनहोनी होनी ॥१६९॥
साँची साँची बातसुन रेमन छांड पखंड ।
निरंकुश तृप्ति लहै तब जब चीनै एक अखंड ॥
जब चीनै एक अखंड शुद्ध तब होवै दृष्टी ।
कर्त्ता क्रिया रु कर्म न किंचित भासे सृष्टी ॥
कह गिरिधर कविराय और करनी सब काची ।
जिस कर आतमलभै जान विद्या सो सांची१७०
कीच पीछलो धोइकै आगे नाहिं लगाव ।
ऐसा तुझको फेररे मिले न जलदी दाव ॥

मिले न जलदी दाव भनत गुरु सुनै न बहरे।
सर्व समग्रीहोत या भूल्यो सिखर दुपहरे॥
कह गिरिधर कविराय धॅसो मत कॉदेबीच।
ऊंचेमारग चलौ जहां फिर लगै न कीच॥१७१॥
ऐसी रचना तै रची अतुल असंख्य अमाप।
रचकर जब देखन लग्यो भूलगयो फिर आप॥
भूलगयो फिर आप जूठको सच करि जान्यो।
सांचे को पुनि जूठ देवको देवल मान्यो॥
कह गिरिधर कविराय सुपनकी सृष्टी जैसी।
जाग्रत में रहनाहिं दृश्य संपूरण ऐसी॥ १७२॥
मड़ी बांध बैठत नहीं नही प्रबोधत सती।
करन ग्रामको वशकरै वीतराग नरयती॥
वीतराग नरयती न भिक्षा करै सथूला।
विविक्त देश में रहै मिटाय अविद्या मूला॥
कह गिरिधर कविराय भ्रांतिकी तोरे तगड़ी।
अन्न प्रान मन बुद्धि कोश आनंद जोमडी १७३॥

विगरे तो जो होय कछु विगरनवालीसे ।
अक्लेद्य अदाह्य अशोष्यको कौन शखस कोभै ॥
कौन शखस कोभै बुद्धि यह जिसने पाई ।
तिसके ढिग दिलगीरि कदाचित नाही आई ॥
कह गिरिधर कविराय कालत्रय जोना डिगरे ।
अचल अछेद्य अकृतम सोकहु कैसे विगरे१७४ ॥
देहदुःखकी खानहै गृह सत शोक किखान ।
अविद्या जोहै आपनी जन्माकर पहिचान ॥
जन्माकर पहिचान समझ जो सुखकी खानी ।
जामे वेदप्रमाण पुनः आपत की बानी ॥
कह गिरिधर कविराय निरंकुश तृतीएह ।
छूटैतनु अभिमान द्रष्ट फिर रहै न देह ॥१७५॥
साखीका लक्षण सुनो साक्षी कहिये सोइ ।
उदासनि चैतन्य पुनि समीपवर्ती जोइ ॥
समीववर्ती जोइ सोइतो साक्षी होई ।
इन लक्षण ते रहित को साक्षी कहै न कोई ॥

कह गिरिधर कविराय वेद पुनि लोकहु भाषी।
हुया नहै नहिंहोइ और साषी को साषी ॥१७६॥
चेलो उनको चाहिये जिनके धन वा धाम ।
इन बिन चेला जो करै सोहै पुरुष सकाम ॥
सोहै पुरुष सकाम कामनावान अजारी ।
वीतरागको स्वांग बनायो महा बजारी ॥
कहगिरिधर कविराय विरक्त जन रहै अकेलो ।
जिन को तृष्णा रोग लग्यो सो मूढो चेलो१७७॥
पडनो पुनः पडावनो वागेंद्रियका विसा ।
सोतोहै यह तबतलक जबतकहोइ न निसा ॥
जबतकहोइ न निशा असल दिल अंतरखासी ।
अत्यंत अघायो पुरुष भात कब खावै बासी ॥
कह गिरिधर कविराय ज्ञानमारगको चढनो ।
ब्रह्मधाम साक्षात भये फिर बनै न पडनो॥१७८॥
सौदा ऐसा कीजिये जामे परे न टोट ।
जहांजाइ तहँ नफाहो बंधनि लगै न पोट ॥

बंधनिलगै नपोट खरच ना लागै पैसो ।
आडरहित पुनि विचरै नख पट कारी वैसो ॥
कह गिरिधर कविराय चढै हाथीके हौदे ।
ऐसो कौन कुवखत करै फिर नाखिस सौदे॥१७९
खटके वाली वस्तु को दीनी जिसने डार ।
भावै रहै बजारमें भावै बीच उजार ॥
भावै बीच उजार परारहै मुखै न बोले ।
अथवा बात अनेक करै निशि बासर डोले ॥
कह गिरिधर कविराय चीज जो चारो पटके ।
सुत दारा धन धाम गये तिनके सब खटके १८०
पोल निकास्यो जगतको सुषुप्ति अवस्था माहि ।
नाम रूप संसारकी जहां गंध कछु नाहि ॥
जहाँ गंध कछु नाहिं वरणाश्रम भ्रम त्राटी ।
लेश कहूंना रही किसी मतकी परघाटी ॥
कह गिरिधर कविराय आतमा एक अडोल ।
ताबिन और प्रपंच सबंको काढ्यो पोल॥१८१॥

कह गिरिधर कविराय वेद पुनि लोकहु भाषी।
हुया नहै नहिंहोइ और साषी को साषी ॥१७६॥
चेलो उनको चाहिये जिनके धन वा धाम ।
इन बिन चेला जो करै सोहै पुरुष सकाम ॥
सोहै पुरुष सकाम कामनावान अजारी ।
वीतरागको स्वांग बनायो महा बजारी ॥
कहगिरिधर कविराय विरक्त जन रहै अकेलो।
जिन को तृष्णा रोग लग्यो सो मूढो चेलो१७७॥
पडनो पुनः पडावनो वागेंद्रियका बिसा ।
सोतोहै यह तबतलक जबतकहोइ न निसा ॥
जबतकहोइ न निशा असल दिल अंतरखासी ।
अत्यंत अघायो पुरुष भात कब खावै बासी ॥
कह गिरिधर कविराय ज्ञानमारगको चढनो ।
ब्रह्मधाम साक्षात भये फिर बनै न पडनो॥१७८॥
सौदा ऐसा कीजिये जामें परे न टोट ।
हां [illegible] तहँ नफाहो बंधनि लगै न पोट ॥

बंधनिलगै नपोट खरच ना लागै पैसो ।
आडराहित पुनि विचरै नख पट कारी वैसो ॥
कह गिरिधर कविराय चढै हाथीके हौदे ।
ऐसो कौन कुवखत करै फिर नाखिस सौदे॥१७९
खटके वाली वस्तु को दीनी जिसने डार ।
भावै रहै बजारमें भावै बीच उजार ॥
भावै बीच उजार परारहै मुखै न बोलै ।
अथवा बात अनेक करै निशि बासर डोलै ॥
कह गिरिधर कविराय चीज जो चारो पटके ।
सुत दारा धन धाम गये तिनके सब खटके १८०
पोल निकारयो जगतको सुषुप्ति अवस्था माहिं ।
नाम रूप संसारकी जहां गंध कछु नाहि ॥
जहाँ गंध कछु नाहिं वरणाश्रम भ्रम त्राटी ।
लेश कहूंना रही किसी मतकी परघाटी ॥
कह गिरिधर कविराय आतमा एक अडोल ।
ताविन और प्रपंच सबको काढ्यो पोल॥१८१॥

कह गिरिधर कविराय वेद पुनि लोकहु भाषी।
हुया नहै नहिंहोइ और साषी को साषी ॥१७६॥
चेलो उनको चाहिये जिनके धन वा धाम ।
इन विन चेला जो करै सोहै पुरुष सकाम ॥
सोहै पुरुष सकाम कामनावान अजारी ।
वीतरागको स्वांग बनायो महा बजारी ॥
कहगिरिधर कविराय विरक्त जन रहै अकेलो।
जिन को तृष्णा रोग लग्यो सो मूढो चेलो१७७॥
पडनो पुनः पडावनो वागेंद्रियका विसा ।
सोतोहै यह तबतलक जबतकहोइ न निसा॥
जबतकहोइ न निशा असल दिल अंतरखासी।
अत्यंत अघायो पुरुष भात कब खावै बासी॥
कह गिरिधर कविराय ज्ञानमारगको चढनो।
ब्रह्मधाम साक्षात भये फिर बनै न पडनो॥१७८॥
सौदा ऐसा कीजिये जामें परे न टोट ।
९। - तहँ नफाहो बंधनि लगै न पोट ॥

बंधनिलगै नपोट खरच ना लागै पैसो ।
आडरहित पुनि विचरै नख पट कारी वैसो ॥
कह गिरिधर कविराय चढै हार्थीके हौदे ।
ऐसो कौन कुवखत करै फिर नाखिस सौदे॥१७९
खटके वाली वस्तु को दीनी जिसने डार ।
भावै रहै वजारमे भावै वीच उजार ॥
भावै वीच उजार परारहै मुखै न बोलै ।
अथवा बात अनेक करै निशि वासर डोलै ॥
कह गिरिधर कविराय चीज जो चारो पटके ।
सुत दारा धन धाम गये तिनके सब खटके १८०
पोल निकास्यो जगतको सुषुप्ति अवस्था माहिं ।
नाम रूप संसारकी जहां गंध कछु नाहिं ॥
जहाँ गंध कछु नाहि वरणाश्रम भ्रम त्राटी ।
लेश कहूंना रही किसी मतकी परघाटी ॥
कह गिरिधर कविराय आतमा एक अडोल ।
ताविन और प्रपंच सबको काढ्यो पोल॥१८१॥

वांधी कसकर कमर जिन जिस कारजके हेत ।
आलस तजि तत्पर भयो सोइ सिद्ध करलेत ॥
सोइ सिद्ध कर लेत बेरना लगै उसी छिन ।
ज्यों टिटिभनिने अंड सिंधुसे कियो जबीप्रन ॥
कह गिरिधर कविराय चित्त वृत्ति जिसकी फांधी ।
तिसको सब कछु सुलभ फेंट जब दृढकर बांधी॥
साधनचवसंपन्नजो पट्लिंग सहित वेदांत ।
सद्गुरु मुखसे श्रवण कर सेवै देशइकांत ॥
सेवै देश इकांत बाह्य मुख वृत्ती हरके ।
होवे स्थिर प्रज्ञा मनन निदिध्यासन करके ॥
कह गिरिधर कविराय अहंब्रह्म करै अराधन ।
अपरोक्ष ज्ञानके भये फेर कछु रहै न साधन१८३
परम प्रेमको विषय जो सोहै अपनो इष्ट ।
ताबिन और जुजगतमें सो सब जान अनिष्ट ॥
सो सब जान अनिष्ट दृष्टि यह जिनको जागी ।
सो पुमान उत्कृष्ट श्रेष्ठ अतिशय बड़भागी ॥

कह गिरिधर कविराय अलौकिक पायो मरम ।
याते परे न और कोउ पुरुपारथ परम ॥१८४॥
आदरतथा अनादरे वचन बुरे त्यो भले।
अप्रभु प्रभुता जगतकी धर जूतेके तले ॥
धर जूतेकेतले राग पुनि द्वेप विनारे ।
महासिंधु कोतरे डुबे क्यों शुष्क किनारे ॥
कह गिरिधर कविराय पहिर समताकी चादर।
हर्ष शोक कर दूर तथा दुनियाके आदर १८५॥
खीर पिवैया शखसजो सो नहिं खावत घास।
दुग्ध मिलैतो तृप्त हुइ नहितो रहै उपास ॥
नहितो रहै उपास और ऊपाव न तीसर ।
अदृष्टके अनुसार आपरच दीन्हो ईश्वर ॥
कह गिरिधर कविराय है जिनका भोजन नीर।
तिनको नित जल मिलै खीर खोरेको खीर १८६
आफत आतमको परी कुवर्गाध्यास अठीक ।
बिना विचारे सिद्ध है विचारे होत अलीक ॥

बांधी कसकर कमर जिन जिस कारजके हेत
आलस तजि तत्पर भयो सोइ सिद्ध करलेत ।
सोइ सिद्ध कर लेत बेरना लगै उसी छिन
ज्यों टिटिभनिने अंड सिंधुसे कियो जबांग्रन ।
कह गिरिधर कविराय चित्त वृत्ति जिसकी फांधी
तिसको सब कछु सुलभ फेंट जब दृढकर बांधी
साधनचवसंपन्नजो पट्लिंग सहित वेदांत।
सद्गुरु मुखसे श्रवण कर सेवै देशइकांत ।
सेवै देश इकांत बाह्य मुख वृत्ती हरके
होवे स्थिर प्रज्ञा मनन निदिध्यासन करके
कह गिरिधर कविराय अहंब्रह्म करै अराधन
अपरोक्ष ज्ञानके भये फेर कछु रहै न साधन१८
परम प्रेमको विषय जो सोहै अपनो इष्ट
ताबिन और जुजगतमें सो सब जान अनिष्ट
सो सब जान अनिष्ट दृष्टि यह जिनको जागी
सो पुमान उत्कृष्ट श्रेष्ठ अतिशय बड़भागी

कह गिरिधर कविराय अलौकिक पायो मरम ।
याते परे न और कोउ पुरुपारथ परम ॥१८४॥
आदरतथा अनादरे वचन बुरे त्यो भले ।
अप्रभु प्रभुता जगतकी धर जूतेके तले ॥
धर जूतेकेतले राग पुनि द्वेप विनारे ।
महासिंधु कोतरे डुबे क्यो शुष्क किनारे ॥
कह गिरिधर कविराय पहिर समताकी चादर ।
हर्ष शोक कर दूर तथा दुनियाके आदर १८५॥
खीर पिवैया शखसजो सो नहिं खावत घास ।
दुग्ध मिलैतो तृप्त हुइ नहिंतो रहै उपास ॥
नहिंतो रहै उपास और ऊपाव न तीसर ।
अदृष्टके अनुसार आपरच दीन्हों ईश्वर ॥
कह गिरिधर कविराय है जिनका भोजन नीर ।
तिनको नित जल मिलै खीर खोरेको खीर १८६
आफत आतमको परी कुवर्गाध्यास अठीक ।
बिना विचारे सिद्ध है विचारे होत अलीक ॥

विचारे होत अलीक सुपनका जैसे लस्कर ।
इंद्रजालको देव ठुंटको मिथ्या तस्कर ॥
कह गिरिधर कविराय चहे नित होवे जाफत ।
तृतियवासना प्रेत लग्यो चेतनको आफत॥१८७
हाइ हाइ तबलगरहे जब लग बाह्यहु दृष्ट ।
अंतर्मुख जब धीभई सब मिटजाइ अनिष्ट॥
सब मिटजाय अनिष्ट रहो उत्तर वा बागड ।
जहाँ जाइ तहँ आनंद जब मन भयो इकागर ॥
कह गिरिधर कवि धाम चारि फिर आवे धाइ ।
जीव ब्रह्म इकज्ञान बिना ना मिटहै हाइ ॥१८८॥
दशमाग्रह अध्यासहै नवग्रह का जो मूल ।
जब लग देहाभिमान है तबलग मिटै न शूल ॥
तबलग मिटै नशूल करै केती चतुराई ।
देव जजै जपजजै नसुरको होत सहाई ॥
कह गिरिधर कविराय ज्ञानदृढ देवे चसमा ।
भूला विद्या नाश होइ महरहैनदशमा ॥ १८९ ॥

श्रद्धा शक्ती उभय कर होत साधुकी सेव ।
जगमे एक न होइजो धन्यो रहै गुरुदेव ॥
धन्यो रहै गुरुदेव भक्ति तिस करे न कोई ।
विनकार न कछुकारज उत्पन्न हुया न होई ॥
कह गिरिधर कविराय त्याग कर मलिन सपर्धा ।
जोधन होवै पास संतपर कीजै श्रद्धा ॥ १९० ॥
आतमरथी शरीररथ बुद्धि सारथीजान ।
मनडोरी इंद्रिय हय मारग विषयपिछान ॥
मारग विषय पिछान देह इंद्रिय मन योगा ।
दुख सुख भोगै भोग तत्त्ववित कहै प्रयोगा ॥
कह गिरिधर कविराय हवैएही परमातम ।
बुद्धि सारथी जान देहरथ रथीजु आतम॥१९१॥
शेषी आतम देवइक पुत्रादिक सबशेष ।
यह विवेक जाकेहिये ताको कहाँ कलेश ॥
ताको कहां कलेश समझ हृदय जब आई ।
अन्यो अन्याध्यास तदातमरहै नशाई ॥

कह गिरिधर कविराय जासमैं फजर न पेपी
अभय निरंजन देव आतमा सोतू शेपी ॥१९२।
क्षिप्तमूढ विक्षिप्त पुनि एकाग्रता निरोध
पंचभूमिका चित्तकी आतम इक अविरोध ॥
आतम इक अविरोध भूमिकाको परकाशक।
आप हुलास स्वरूप पुनः जड़ वर्ग हुलासक ॥
कह गिरिधर कविराय चिदानंद सदा अलिप्त।
लिपाय मान मन बुद्धि वृत्तिहै जामे क्षिप्त।१९३॥
जाग्रत सुपन सुपोपति मूर्च्छा पुनाःसमाधि।
पंच अवस्था बुद्धिकी आतमरहित उपाधि ॥
आतमरहित उपाधि अकर्ता सदा अभुक्ता।
क्षुधा पिपासा हर्ष शोक मत्सरते मुक्ता ॥
कह गिरिधर कविराय वृत्ति विक्षेपइकाग्रत।
सबी अनातम धर्म समाधि पर्यंत सो जाग्रत१९४
माया मोह मद राग पुनि ममता दंभरु काम।
यह जामे नहिं पाइये सो परमेश्वर राम ॥

सो परमेश्वर राम सबका जानन हारा।
और सबै अध्यस्त आप धिष्ठान अपारा॥
कह गिरिधर कविराय ध्यानधर सुनरे भाया।
सोतू भूमा तूहि अरोपित जिसमें माया॥१९५॥
आश्रय आशा उभय तजि खावै टुकड़ो मांग।
कहूं किनारे पड़रहै राख टांगपर टांग॥
राख टांगपर टांग चाह चिंता सब खोवै।
भावै जागै निशिभर अथवा दिनभर सोवै॥
कह गिरिधर कवि मरियत ठाकुर द्वार उपासरे।
धर्मशाल पुनिडांड़ रहै भिक्षुविन आसरे॥१९६॥
कांटेतले विछायकै करै पुरुषको शैन।
देत समयको दोष पुनि तनकपरे नहिं चैन॥
तनक परे नहिं चैन काल अब आयो भारी।
जिनकी चखमे करै अंगुरियां देवत गारी॥
कह गिरिधर कविराय मोल देले वेन्नाटे।
ताकर चहै अराम गाड़कर तनमे काटे॥१९७॥

बोवै पेड बबूलके खाई लोडै द्राख।
धनी बननकी कामना करे संगरे राख।
करे संगरे राख पहऱ्यो चाहे क्रमची
रँगे रंगचमरूय रगड मंजीठ हिरमजी।
कह गिरिधर कविराय सुखी सो कैसेहोवै
तृष्णा राग रु द्वेष ईरषा मत्सर बोवै ॥ १९८।
खानो अपनो प्रारब्ध फिर क्यों होना दीन।
रहनो जगत सराइमें दावा कहाप्रवीन॥
दावा कहा प्रवीन जु कीनो अपनो पइये।
बुरे काम का नाम भूलकर कबहुँ न लइये॥
कह गिरिधर कविराय जुतिलइक संग न जानो।
तो संग्रह नहिं बनै बनै देनो वा खानो ॥ १९९॥
भोग एक युग भोगता होवै तहां विवाद ।
जहां न शेषी दूसरो कोहु न करै विषाद ॥
कोहु नकरै विषाद उदय जब होवे सुकृत ।
मंगलचारो उरै सबी दुरजावै दुष्कृत

कह गिरिधर कविराय यही तो कमला रोग ।
अहंता उभय प्रकार पुनः यद किंचित भोग२००
तीन ईषना त्यागके करै मुमुक्षू शोध ।
सोपरिग्रहको क्योंचहै जिनके आतम बोध ॥
जिनके आतम बोध वैरावै आइ चलाई ।
आगे देवनहार जहां तहँ है महमाई ॥
कह गिरिधर कविराय सुहोवै कदी न दीन ।
जिसने दई उठाय वासना मनसेतीन ॥ २०१ ॥
मेरी तेरी छोड़के पक्षापक्षहि नाख ।
राग द्वेषको दूरकर निजानंद रसचाख ॥
निजानंद रसचाख और रसलागै फीके ।
एक ज्ञानके भये दुःख मिटजावै जीके ॥
कह गिरिधर कविराय रंगजोपैरै गेरी ।
तब यह होवै सफल तजै जब मेरी तेरी ॥२०२॥
दुखी परमेश्वर बनरह्यो भई आपनी चूक ।
परमानंद रसछांडके चाटन लाग्यो थूक ॥

चाटन लाग्यो थूक यहीतो अहमक ताई।
तिसका चिंतन करै नजिनमें सुख इकराई॥
कह गिरिधर कविराय हुयो चाहै जो सुखी।
चीनै अपना आप फेरना होवै दुखी ॥ २०३॥
मौला लोक पुकारदे रेमन मत हो तंग।
पुनः किसीको मतकरो गृहमे लागैरंग॥
गृहमें लागैरंग अविद्या बंधन टूटै।
मिलैं विवेकी संत कुपत्तोंका सँग छूटै॥
कह गिरिधर कविराय त्याग कर मारग औला।
जौन तौन परकार आपको लखले मौला २०४॥
जोड़े वृत्ती ब्रह्ममें सर्व तरफसे मोड़।
पुनः प्रमादी नरोंकी तनकनराखै लोड़॥
तनक न राखै लोड़ वहुत तिन साथ न वोलै।
मन वाणीको अचल करे जो वहुरि न डोलै॥
कह गिरिधर कविराय प्रीति विषयनकी तोड़े।
सर्व तरफसे खैंच चित्त प्रत्यकमे जोड़े॥ २०५॥

ारण महा विछेपका मेला जात जमात ।
न समान संसारमे और न कोउ उपाध ॥
ौर न कोउ उपाधि यथा एहैं त्रय व्याधी ।
ोजन इनमे धसे तिनोको कहाँ समाधी ॥
हह गिरिधर कविराय उपद्रव जो अतिदारन ।
ाग द्वेष अपमान मान इनकात्रय कारन ॥ २०६ ॥
ोइ रोइके पाइये रुपिया जिसका नाम ।
ावजाये फिर रोइये इह सुख जिसको काम ॥
ह सुख जिसको काम इसम तिसकाहै रूपी ।
जसके हेत मजूरी करै उठावै कूपी ॥
कह गिरिधर कविराय खोज कर्दम धोइ धोई ।
ुनःवणिज नौकरी कृपीकर रोई रोई ॥ २०७ ॥
ाई गई पुनि गईरे करके निशि दिन सोर ।
ाडचाल पुकारै और कछु,तैं समझी कछु और ॥
तैं समझी कछु और यथारथ नाहम भाषी ।
ापर इक दृष्टांत सुनो बदरनकी साषी ॥

कह गिरिधर कविराय समझ जब उलटी भई ।
घटिका घटिका करके सगरी आयुष गई ॥२०८॥
जैसा कैसा अन्नले भिक्षू करै अहार ।
मोटा जीरण कापडो पहरै तजै विकार ॥
पहरै तजै विकार चीनकर अपनी हुदा ।
उदासीन है रहै सर्वसे पकरै मुदा ॥
कह गिरिधर कविराय समीप न राखै पैसा ।
सोई परम विरक्त भनेहै शास्त्रहु जैसा ॥ २०९॥
हुरमत राखीचहे जे समझ समझने योग ।
समझ यथारथके भये रहैन कोई रोग ॥
रहै न कोई रोग रोगका मूल अविद्या ।
सो पुनिहोवै नाश प्रकाशै आतम विद्या ॥
कह गिरिधर कविराय दूरकर दिलकी दुरमत ।
परलोक लोकमे बनी रहैज्योंकी त्यो हुरमत२०१
स्वतंतर अपने भयो जब परतंतर पाप ।
ब्रह्मलख्यो जिन आपको जपै कौनको जाप ॥

तपै कौनको जाप करै फिर किनकी सेवा ।
भिन्न आपसे देखै नाकोउ देवी देवा ॥
कह गिरिधर कविराय जपे निशि बासर मंतर ।
अहं सच्चिदानंद अखंड अद्वितीय स्वतंतर २११।
तृषावंतको पतित नर पुनः तपायो गाम ।
सो नहिं जावै गंग ढिग गंगासो उपराम ॥
गंगासो उपराम सुरसरी तीर न जावै ।
स्वर्धुनिको क्या काम जु ताके ढिग चलिआवै ॥
कह गिरिधर कविराय त्यों नख शिखग्रास्यौ तृषा
सो सतसंग न करै संतको क्या है तृपा ॥२१२॥
ग्रही असीकर ज्ञानकी करी अविद्या घात ।
लोक ईषणा वासना भई दीनता पात ॥
भई दीनता पात सहित देह दृश्य असाता ।
जात पांत सब गई जगतका टूट्या नाता ॥
कह गिरिधर कविराय भ्रांति तिसके डव रही ।
ब्रह्मविद्यातेग हाथमे जिसने ग्रही ॥ २१३ ॥

अमूढ पुनः यह मूढहै शुद्ध अशुद्ध निहार।
ऐसी जिसकी दृष्टि है भ्रमे बीच संसार॥
भ्रमे बीच संसार मरे मर मर फिर जनमे।
शोक निवर्तन होइ भेद बुधि जब तक मनमें॥
कह गिरिधर कविराय लखै जो एक अगूढ।
ताको नाहिं कदाचित भासै मूढ अमूढ ॥२१४॥
कच्ची जैसी लोड है ऐसो और न पाप।
जिसके अंतर कामना करै अनेक प्रलाप॥
करै अनेक प्रलाप ग्रस्यो जो चाहचमारी।
अहंता ममता त्वंता लगी असाध विमारी॥
कह गिरिधर कविराय वस्तु जब पावै सच्ची।
फेर न मनमें रहै वासना लौकिक कच्ची ॥२१५॥
कोरा देहु जवाब तू सबको हुइ निःशंक।
उपरामवृत्तिको ग्रहण कर रहै न कोइ कलंक॥
रहै न कोइ कलंक पंककोसौविध धोवो।
अपनी इच्छा विचरो बैठो जागो सोवो॥

कह गिरिधर कविराय वासना रखो न भोरा ।
ंच न लागे दाग रहै कोरेका कोरा ॥ २१६ ॥
ंग न कोऊ राखिये त्याग आनकी आश ।
एकाएकी विचरिये तोडि भ्रांतिकी पाश ॥
तोड़ि भ्रांतिकी पाश रहै वनमें वा जनमें ।
आतम चिंतन करै सदा निशि वासर मनमें ॥
कह गिरिधर कविराय चढे जब अपना रंग ।
किसकी राखे चाह करे पुनि किसका संग २१७॥
चार पहर दिन हरवखत चार पहर पुनि रात ।
आतम चितन कीजिये त्याग अनातम बात ॥
त्याग अनातम बात प्रसंग न कबहुं चलावे ।
अद्वय अखंड अपार आतम मन तिसमें लावै ॥
कह गिरिधर कविराय आपको चीने सार ।
देह मन इंद्रिय प्राण यह मिथ्या जाने चार२१८।
काल्ह काम करना जोऊ सोतो कीजे आज ।
मूल अविद्या नींदते शीघ्रहि तू अब जाग ॥

शीघ्रहि तू अब जाग आपना करले कारज।
ऐसो मानव देह फेर कब मिलहीं आरज।
कह गिरिधर कविराय काटकर भ्रमके जाल
लखो आपको ब्रह्म कालको जोहै काल ॥२१९॥
भोग परमसुख आशका दिलगीरी करदूर
भावे वेचकरो सफल भावे फुट्टकपूर।
भावे फुट्टकपूर पहिर कंबल वा खासा
भावे धरहू ध्यान भावे नित देख तमासा।
कह गिरिधर कविराय करो भावे हठयोग।
अथवा ज्ञान समाधि करो ब्रह्मानंद भोग॥२२०॥
सुनियत है भागीरथी पातक हरन अपार।
पुनः पाप निर्मूलको गंगा ब्रह्म विचार॥
गंगा ब्रह्म विचार कर्म छेदनको छैनी।
अविद्या उदर विदारनको यमदाडी पैनी॥
कह गिरिधर कविरायजुचितियतकथियतगुनियत
सो सब जान अनातम जो जो श्रवणे सुनियत२२१

[म]हिमाजो निर्वेदकी, को कहिसकेउदार ।
[त्]यागी बंधनसो मुकत्त, बाकी सब गिरफ्तार ॥
[ब]ाकी सब गिरफ्तार दीन आधीन भयोजी ।
[न]िज स्वरूपको भूल आपको मान लियोजी ॥
[क]हि गिरिधर कविराय नलागतहै इक लहिमा ।
[ज]िस क्षण करहै त्याग उसी क्षण होवत महिमा२४
[प]रमारथ पहिली सिढ़ी, जासु नाम निर्वेद ।
[प]ामर ताको नालहै, पावत है नित खेद ॥
[प]ावत है नित खेद उसे नहिं त्याग सके सुध ।
[म]ोह मदिरासे मत्त स्वपर की नही रही शुध ॥
[क]हि गिरिधर कविराय जो नरतनु खोत अकारथ ।
[ब]ाह्य सुखी होरहे न समझे कछु परमारथ ॥२२५॥
[ज]हँ विराग की क्या कथा, इन्द्रिय जहँ आराम ।
जौन तौन परकार कर, पोषे हाड़रुचाम ॥
पोषे हाड़रु चाम बाह्यमुख भये जनूनी ।
[illegible] घात अनातमदर्शी खूनी ॥

श्री ।

अथ कवि गिरिधरकृत कुण्डलिया॥

द्वितीय भाग २.

जाके जानेतेविना, भासित नानाकार।
जास जान ते लीनहो, तेहि वन्दों त्रिधा प्रकार॥
तेहि वन्दों त्रिधा प्रकार करों कछु वाग विलासा।
ब्रह्मविद्या गर्भित ज्ञान मय नरकी भाषा॥
कहि गिरिधर कविरचना आश्रय होवत जाके।
सो निर्विशेष अकृतिम गिरा ढिग जाय न जाके॥
कहूं कीर्ति वैराग्यकी, कनक कामिनी दोष।
निषेध पखण्डनको करूं, हो जिज्ञासु मन होश॥
हो जिज्ञासु मन होश सोइ अव कवित सुनाऊं।
भेद मतन को खण्ड कछुक पुनि और भि गाऊं॥
कहि गिरिधर कविराय मोह मद मनका दहूं।
हो अभेदको ज्ञान सोय श्रुति अनुभवकहूं२२३॥

था जानले स्वकी तीनको एकै रूपम् ।
स्थि मांस नख चर्म रोम मल मूत्रहि कूपम् ॥
हि गिरिधर कविराय पुरुष इन किये अजारी ।
सा दुष्ट न और जगत में जैसी नारी ॥ २२९ ॥
पा मूरति पापकी, ज्यहि पिप भुले गँवार ।
र देखाकर नरक का, सब जन करत खुवार ॥
ब जन करत खुवार भ्रमावत विधि पुनि हरिहर।
ह रज्जु गलबांध नचावत कपिवत् घर घर ॥
हिगिरिधरकविराय जोइ नर चाहत मोपा ।
त्रि गहै वैराग्य तजै हाटक भूयोपा ॥ २३० ॥
ङ्गना देखाकर अङ्गको, करै पुरुपको भ्रान्त ।
ान्ता याको कहत है, हरे मनुजकी कान्त ॥
रे मनुजकी कान्ति नाम तिसकाहै वामा ।
मावे नरको बाँध कण्ठ दृढ मोहकि दामा ॥
हि गिरिधर कविराय पहिर कर करमे कङ्कना।
ब अनर्थ को हेतु कथी गृहलाव न अङ्गना२३१

कहिगिरिधर कविराय शांति तिनके है कहां।
विषयजन्य सुख चहैं वैराग्य न स्वपने तहां २२६॥
जिहासा नाम वैराग्यको, सोहै चार प्रकार
यतमान व्यतिरेकएकेन्द्रियजानलिह्योवशीकार
जानलिह्यो वशीकार सुनो अब तिनका भेदा
तरती व्रती व्रमन्द त्रिधाविध गावत वेदा
कहि गिरिधर कविराय सकल सुखकी है आसा
बड़े भाग्य हैं तिनके जिनके होत जिहासा ॥२७
पुहुमी चामीके अरथ, होवत है नरदीन
जबै प्राप्ति ताकी भई, बुद्धी होत मलीन।
बुद्धी होत मलीन पुनः वधिरोहोअन्धा
विन पाये दांत निकासे ज्यूं परवशमें बन्धा।
कहि गिरिधर कविराय भाव पडिण्त हो ओमी
तिनकोशान्तिनरञ्च जिनोकोहाटक पुहुमी २२८॥
नारीश्रेणी नरक की, है प्रसिद्ध नहिं लुकी।
यथा समान परकीया, तथा जानले स्वकी ॥

कहि गिरिधर कविराय एक आतमरस भीनो ॥
निर्भय विचरे संत सर्वथा तज कर तीनो॥२३४॥
दमरी चमरी बालगृह, होय नेह इनवीच ।
ऊपर चिह्न विरक्तका, सो दुर्बुद्धी नीच ॥
सो दुर्बुद्धी नीच पशू गर्दन की नाईं ।
उभय भ्रष्ट पापिष्ट गृहस्थ न भयो गुसाईं ॥

नैहरजावे रोयकर, पुनि रोती ससुरार।
सब जन अबला कहतहैं, है सबला बदकार॥
है सबला बदकार पुरुषको करती कातल।
कपि ज्यो नाच नचाय अन्तलै जाय रसातल॥
कहि गिरिधर कविराय पिशाचनिहै यह वैहर।
सबके देत चपेट न छोंडत सासरु नैहर ॥२३२॥
सम स्वकीय परकीयकी, परीचुडेलरुहूर।
इनके त्यागे परमसुख, ग्रहण किये दुखभूर॥
ग्रहण किये दुखभूर पुरुषकी बुद्धिबुरावै।
क्षण क्षण फजिहत करत मोह भ्रम तम उपजावै॥
कहि गिरिधर कविराय अजों भी समझ दिवाने।
हूर चुडेलरु परी परकीय स्वकीय समाने ।२३३।
तीनो मूल उपाधिकी, जर जोरू जामीन।
है उपाधि तिसके कहां, जाके नहिं ये तीन॥
जाके नहिं ये तीन हृदयमे नाहिन इच्छा।
परमसुखी सो साधु खाय यद्यपि लै भिक्षा॥

काम शैतानों के करे, औलियाओकी शकल।
शूर नहैं इन्सान की, हैवानोकी अक़ल॥
हैवानो की अकल सिहकी गिरा उचारे।
सिङ्गरानो की क्रिया पकड़ गोबरेड़े मारे॥
कहि गिरिधर कवि नरम गरम तर चाहे ताम।
भिक्षा खावे मांग यही ऊननके काम॥ २४०॥
नाना लिप्सा हृदय मे, बन बैठे उलियाय।
ऐसे पीर मुरीद को, दोनो को ज्ञतियाय॥
दोनोको ज्ञतियाय मगज कर तिनका पोला।
मारो लाके देइ धडाधड़ जूता सोला॥
कहि गिरिधर कविराय पहिर फकिरोका बाना।
जो न लिपसा तजे जूत तिनके शिरनाना॥२४१॥
ना करे बतूनियां प्राकृत जन मध फूल।
ठन वालो जो मिले जाय फारसी भूल॥
य फारसी भूल प्रबल कोइ फुरे न युक्ती।
वैखरी रुके न मुखसे निसरे उक्ती॥

सब शैतानके राह पैगम्बर उम्मत काबा।
रोजा सुनत कुरान शरह कानेब निमाजा॥
कहि गिरिधर कविराय यह रस्ता पाया सौला।
जामें मजहब फनाह एकला मजहब मौला२२७
योगी डूबे योगमें, भोगी डूबे भोग।
योग भोग जाके नहीं, सो विद्वान अरोग॥
सो विद्वान अरोग अचाहि अमान असङ्गी।
भेद भावसे रहित बुद्धि तिसकी यक रङ्गी॥
कह गिरिधर कविराय ज्ञान बिनहै सब रोगी।
भोगी अटके भोग योग में अटके योगी २२८॥
कलाम बेकैदोकी कथे,अन्तर धँस रह्यो मजहब।
ख्वाहिश दुनियाकी करै, बेवकूफसो अजब॥
बेवकूफसो अजब बड़ो कोई है मुखौलिया।
मूढसभाके मध्य कहावे महा औलिया॥
कहि गिरिधर कविराय वस्तु देकरे ललाम।
तिसपर मै अरु तोर सो अहमक लाकलाम।२३९।

कोई लेय न नाम जहाँ तहँ होय अनादर ।
छोड़ जात सब तिसको पिसर औ पिदर बिरादर॥
कहि गिरिधर कवि दुनिया तिसके रहै कनौड़ी ॥
सो गृहस्थ परधान चारहैं जिसपै कौड़ी ॥२४५॥
दारा मरै गृहस्थकी, खाना तिसे खराव ।
राखै रॉड फकीर जो, रहे न तिसकी आव ॥
रहै न तिसकी आव उभय आलमसे जावे ।
ना वह रह्यो गृहस्थ फकिर का पद नहिं पावे ॥
कहि गिरिधर कविराय शोक जो सिन्धु किधारा।
सो नर तिसमें बहे अहै जिसके गृह दारा॥२४६॥
रस सह देखै यती जो, कनक कामिनी दोय ।
तिसी समय वह पतितहो, ब्रह्महत्यारा होय ॥
ब्रह्महत्यारा होय तेज सब हत होजावे ।
मनकी शक्ती चक्षु वाणि ये सकल पलावे ॥
कहि गिरिधरकविराय एकमन औ इन्द्रिय दश।
तिनको करै निरोध त्याग कर लौकिकजेरस२४७

कहि गिरिधर कविराय मूढ मिलकर कम जाता।
सर्वपक्षसे रहित बनावे घरमें वाता ॥ २४२ ॥
आश्रम वर्ण कुल पन्थ में, जाका है आवेश।
ब्रह्मविद्या ता हृदयमें, नाहीं करत प्रवेश।
नाहीं करत प्रवेश विप्र ज्यूं श्वपच अगारा॥
बहु वीथीके डगर बहु निकसत बागद्वारा॥
कहि गिरिधर कविराय भ्रमे भ्रममें निशिवासर।
जाकाहै आवेश पन्थकुल वर्ण मध्य आश्रम२४३॥
धरचो कॉच संदूकमें, रत्न चुराहे डार।
कुत्ती पाली गेहमे, दीनी धेनु निकार॥
दीनी धेनु निकार बड़ो बुधिवंत कहावे।
रजत कीच मे मेल चामके दाम चलावे।
कहि गिरिधर कविराय जान निज रत्न परिहरचो।
पुरुष साध्य कर्तव्य हृदय संदूक ले धरचो।२४४
कौड़ी वाले साधुका, कौड़ी मिले न दाम।
कौड़ी विना गृहस्थका, कोई लेय न नाम॥

गिरिधर कविराय विना परिग्रहसोधनी।
जसकीबुद्धि अद्वितीय बाततिसकी सबबनी२८०
राग चिह्न अज्ञान का, चित व्यायामस्थान।
तिस तरुमें सबजी कहां, जिसकोटर किरशान॥
किरशानु लता फल रहन न पावे।
शब्दादि में पीत जहां तहँ ज्ञान पलावे॥
गिरिधर कविराय विषयका करदेत्याग।
आत्म चिन्ता कर रहो नहीं हो लौकिकराग २८१॥
बाल, तरुण, अरु वृद्ध यह, अवस्थातनुकी तीन।
तीनों में जो अन्तकी, अति कनिष्ट यह चीन॥
अतिकनिष्ट यह चीन करे धीको विपरीत।
स्मरण शास्त्र होत जो पूर्वकीयो अधीत॥
कहे गिरिधर कविराय जाति सब ख्वाब खयाल।
विद्याका परिणाम नसमझतहैं वृद्धबाल२८२॥
या अवस्थाके सदृश,नहिं नीच अवस्था आन।
अभिव्यञ्जक सब रोगकी, किरपणताकी खान॥

तन दुरुस्त से होत हैं, विषयजन्य सुख भोग।
धन दुरुस्त से फिरत हैं, आगे पाछे लोग॥
आगे पाछे लोग जो मनकी होय दुरुस्ती॥
भोग ब्रह्मानन्द अविद्या करै न सुस्ती ॥
कहि गिरिधर कविराय विवेकी जोहै हरिजन।
मनको करै दुरुस्त दुरुस्त न चाहै धन तन२४८
धनी पुरुष के रहत हैं, कां कां चारों ओर।
निर्धन के भां भां रहै, मध्याह्नसांझपुनि भोर॥
मध्याह्न सांझ पुनि भोर प्रमादी दोनो दुखिये॥
अज्ञान आवरण विक्षेप रहित जो सोई सुखिये॥
कहि गिरिधर कविराय बात तिसकी सब बनी।
तिसको जैसा राव रङ्क ठग तैसा धनी ॥२४९॥
बनी बनाई छोड़िये, कोउधरे नहिं नाम।
मत बिगार कर जाइये, बहुरिभिआवे काम॥
बहुरिभि आवे काम शख्स जो और कालमें।
सो विचार कर करो न धोखा पड़े मालमें॥

सवत तेरी किसी सो, नाहै नथी न होग।
हब्बत जिन सँग करे तू, सब सरायँ के लोग॥
ब सरॉय के लोग समझ कर पकड़ क़ायदा।
मझेगा जिसवक्त तुझे तब होगा फ़ायदा॥
हि गिरिधर कविराय जिसमकी जेती किसमत।
तनोही तिसहोयनाजिस्मीकोकोइनिसवत २५६
टो बेटी भार्या, भाई श्वशुर अरु सार।
ता पितामह आदिले, सब मतलबके यार॥
ब मतलबके यार नहीं इनमे कोइ तेरो।
यो तुझे परमाद जो इनको बन रह्यो चेरो॥
हि गिरिधर कविराय सबनसे झगरा मेटो।
तू बाप किसी फेर, तेरा कोई ना बेटो॥ २५७॥
ममता सुत वित नारि मे, त्रयतनु मे हंकार।
नेज आतम विज्ञान विन, चारों वर्ण चमार॥
चारो वर्ण चमार पुनः चारोही आश्रम।
त्यक बोध विहीन नीच डूबे बिन विभ्रम॥

किरपणताकी खानि करै तृष्णाकोजारी ।
वैराग्य तोष पुरुषार्थके काटनको आरी ॥
कहिगिरिधर कविराय उदारताकोहैगरा ।
लोभ मोह युग पुष्ट होय जब आवै जरा ॥२५३॥
थविरावस्था अधमनर, सब जनको अनिष्ट ।
स्व परको फीकीलगै, नाहिं किसीको इष्ट
नाहिं किसीको इष्ट करे तनुको बदरंग ॥
शक्ती होवे क्षीण शिथिल पड़जावे अंग ॥
काहि गिरिधर कविराय नजीक न आवे सबर ।
वैराग्य कमल मुझांत आवे जब रजनी थविर२५४
तुच्छ अवस्था वृद्धहै, करै चित्तको दीन ।
शिथिल शरीर स्थूलहो, कायरताहो पीन
कायरता हो पीन वैराग पड़जावे ढील ।
तितिक्षा सही न जाय रची भगवत यह लीला ॥
कहिगिरिधर काविराय ब्रह्म अद्वितीय जो पुच्छ ।
जिसको है साक्षात् सो तरे अवस्था तुच्छ॥ २५५

मरदमुरीद भूल अपनी अदमीयत ।
होये जाल मे बँधे दुःख विनदुखिये थीयत॥
ह गिरिधर कविराय चले जब श्रुति अनुसार।
ूल जगत होय नाश फेरनाहो संसार ॥२६१
त तैल तण्डुल लवण, तक्र ईन्धन रास।
ाशि दिन चिन्तन जोकरै,तिसविपुलबुद्धिहो नाश
पुल बुद्धि होनाश कियाकुण्ठित पीनी।
थूल पदारथ गहे वस्तु नाहि पावे झीनी॥
कहि गिरिधर कविराय करत विपयनमे निरत॥
मिश्री दुग्ध जलेबी बरफी चाहे घृत ॥ २६२ ॥
ाहींजानत आपको, ताको है धिक्कार।
श्वान वमनके तुल्य है, जो वह करै अहार ॥
जो वह करै अहार सोतो पुरीप समाना ।
प्रत्यक ब्रह्म अभिन्न नहीं जिनके यह ज्ञाना ॥
कहि गिरिधर कविराय तपे त्रय तापन माही।
आपको जानत नाही ॥२६३॥

कहि गिरिधर कविराय नाहिं तिनके दिल समत
त्रयं तनुमें हंकार नारि सुत वित में ममता॥२५

ढबूये बबूये वानको, कहु किसने किया फकीर
ढबूये बबूयेते विना, गृहस्थी महा जहीर
गृहस्थी महा जहीर वह तो दुनियाका लौंडा
मरम फकीरी का किया जाने पागल शौंडा
कहि गिरिधर कविराय खरीद हथैडे ढबूये
फकिर नहीं पाखण्डी पतित जो राखत ढबूये२५

लड़का लड़की भार्या, काचे तीन मशान
जिस अन्तरकरें प्रवेश यह, देतन इत उत जान
देत न इत उत जान बुद्धि टुकडे कर डारत
होवे दृष्टि विपर्यय अन्यको अन्य निहारत
कहि गिरिधर कविराय मिटे नहिं तिनका धड़का
जिनकेहै धन धाम मेहरी लड़की लड़का २६०

संसार दशाको देखके, बोले शेख फरीद
रांडा वनरही पीर खुद, हूरा मरद मुरीद

कहि गिरिधर कविराय अनातम पांचो कोश ।
वसो हो उपराम चीन करबहुधा दोष ॥ २६६ ॥
रहे न जिसने विना दिन, तीस प्राणमय कोश ।
सो निशंक हो माँगिये, मांगन मे नहिं दोष ॥
मांगन मे नहिं दोष ग्लानि कहँ सब तज दीजै ।
जैसे तैसे जहां तहां ते भिक्षालीजै ॥
कहि गिरिधर कविराय परमसुखको जो चहे ।
उदासीन हो सबसे अन्तर्मुखहोके रहे ॥ २६७ ॥
देवी बपरी घास की, गोवर का नैवेद ।
जैसे नरके भाग्य है, तैसे सुख पुनि खेद ॥
तैसे सुख पुनि खेद तथा अपमान जुमाना ।
कर्मनके अनुसार मिले पट भूषण खाना ॥
कहि गिरिधर कविराय छोड़कर देवा लेवी ।
तिसकाचिन्तन करो अरोपित जिसमे देवी २६८॥
धीरे धीरे जायगा सब देवनको साथ ।
मूर्तिकाष्ठकीही रहे बावा पारसनाथ ॥

लोभ पापका बीजहै, रसव्याधिका बाप
राग कैदका बीजतज, तीन सुखी हो आप
तीन सुखी हो आप ताप नहिं तुझे तपावे
भव निधि तरे सुखेन फेर नहिं गोते खावे
कहि गिरिधर कविराय नतुझको व्यापे क्षोभ
काम वृत्तिके सहित त्यागता जिस क्षण लोभ
रॉड सॉड पुनि भॉडका, तजके इनका संग
जहँ तहँ विचरे भूमिपर, करै वासना भंग
करै वासना भंग वृत्ति अन्तर मुख राखे
ब्रह्म विद्या विना और, कछु सुने न भाषे
कहि गिरिधर कविराय तीन शिर राखे डांड
काया वाणी मनोपर, सोहवत करै न रांड॥२६
दोष स्थूल शरीर में, एक दोय नहिं कोट
पुनि जो एक कृतघ्नता यासम और न खोट
यासम और न खोट यह निमकहरामीसोग
नित सुश्रूषा करतमें फेर नरहै अरोग

जेठो मॅझलो पुरीपको, भाइ अन्न मय कोश ।
यामें हन्ता करी तैं, वामे है किया दोप ॥
वामेंहै किया दोप तलाशी लीजे लाला ।
तिसते इसमें विमल निकसियो कौन मसाला ॥
कहिगिरिधर कविराय अधम मल जैसो हेठो ।
तासिउ कमती नांहि सुजाको भय्या जेठो॥२७२।
आप चाहिकर करेतू, जन जनके सँग मेल ।
जिस दिन त्यागे कामना, कोउ न करे झॅवेल ॥
कोउ न करे झॅवेल आयकर ढिग पुनि तेरे ।
ना कोउ पूँछे वात न कोऊ तुझको हेरे ॥
कहि गिरिधर कविराय मिटे तब तीनो ताप ।
उदासीन हो रहे सबंसे जव तू आप ॥ २७३ ॥
सवाल करै ना तनक भर,विना अन्न पुनितोय।
क्षुधा पिपासा हरन को, भिक्षा मांगे दोय ॥
भिक्षा मागे दोय त्यागे सर्व वासना ।
मन वाणी को रोंके ज्यूं त्यूं करे

बावा पारसनाथ एक शिवचिह्न जोई।
तिसते विन यह नाम रूप दृश्य रहे न कोई॥
कहि गिरिधर कविराय अमोलक रत्न जु हीरे।
जिसके आगे तुच्छ लखो तिस धीरे धीरे२६९॥
वायस वानर ऊंधेरे,उपदेश करत हैं खरे।
यह मन ऐसा दुष्ट है, सङ्गहुसे न टरे॥
सङ्गहुसे न टरे बाह्यमुख भयो विकारी।
कृपण दीन वन रह्यो लगी तृष्णा अति भारी॥
कहि गिरिधर कविराय नाश जब होवे ख्वाहिस।
तबउदारताजगे त्यागे पुनि वृत्ती वायस २७०॥
खाली रहे न एक दिन, रस्तेकी जु सेराय।
भलो बुरो उतरचो रहै, इत उतसे कोइ आय॥
इत उतसे कोइ आय रैनि बस आगे जावे।
तिसके पाछे दूसर और मुसाफिर आवे॥
कहि गिरिधर कविराय दार्ष्टान्तजोसोसुनहाली।
सुख दुख इष्टानिष्ट विना तनुरहै न खाली॥२७१

काहि गिरिधर कविराय पञ्चको शत्तो पञ्च दिवाल।
तिसते होवे पार कूद कर तजे सवाल ॥ २७४॥
भूख विधाताने रची, सबका हरे गुमान ॥
क्षुधा निवारणके अरथ, क्या नहिं करैपुमान ॥
क्या नांहिंकरै पुमान विहित अविहित नादेखे।
खाऊं खाऊं करे भक्ष्याभक्ष्य न पेखे ॥
कहि गिरिधर कविराय नऐसा जगमे दूख॥
त्रयलोकी मे जैसी यह व्यापीहै भूख ॥२७५ ॥
रोग ग्रसे जबदेहको, होवे बुराहवाल।
ना तबदे दीदार खुद, ना पुनि करै जमाल ॥
ना पुनि करै जमाल किसीको जाकर धोरे।
जो कोइ आवे पास कहे तिस पाछे होरे॥
कहि गिरिधर कविराय चित्तको व्यापे सोग।
पूर्वोक्त प्रकार करै फिर लगे न रोग ॥ २७६ ॥
तजके दवा हकीम की, पान करे गंगवार।
देह पात सो ना डरे, पुनि दृढ करै विचार॥

कहि गिरिधर कविराय धसी जाके दिल हूई ।
क्या नहि करै प्रलाप विश्व लोलुप धी हूई२८२॥
अकल क घाटा जहँ तहाँ, कौन दुःख की कमी ।
काम क्रोधकी दया से, जहँ जाये तहँ गमी ॥
जहँ जाये तहँ गमी नजीक न आवे शादी ।
तृष्णा सहित अविद्याकी, जहँ मिहर अनादी ।
कहि गिरिधर कविराय येकीने न उपजे हक्कल ॥
जबलग पैदा होय न घरकी नूरी अक्कल॥२८३॥
बूझी बात निपालकी, बतावे खूबरो रान ।
ऐसी बुद्धीका धनी, क्यो नहोय वीरान ॥
क्यो नहोय वीरान जासमे इद्दु वज्ररँगी ।
माँग्यो गुले अनार पकड कर लिया ओ मुरगी॥
कहि गिरिधर कविराय ढिग पड़ी वस्तु नसूझी ।

मिलनो जाकर जनोको, आछे तीन प्रकार।
अर्थ परमार्थ के लिये, वा परम स्नेही यार॥
परम स्नेही यार पाय कर कीजे मेला।
इन विन और न संग एक पग चले न भेला॥
कहि गिरिधर कविराय चौथे संग जो मिलनो।
बेवकूफ को काम सो नाकिस ऐसो मिलनो २८०॥

मतलब होय पुमानको, वसे श्वपचके धाम।
विना प्रयोजन विप्रका, कथन करै नहिं नाम॥
कथन करै नहिं नाम न जावै वाके धोरे।
जो आवै वह वास कहै तिस पाछे होरे।
कहि गिरिधर कविराय खायके जावे मतलब
तऊ न माने खेद तुच्छ जो अपनो मतलब२८१॥

हुई वौरही वुद्धि तिस, जिसको भड़की पौन।
अवाच्य वचन यद्वातद्वा वकै सर्वथा तौन॥
वकै सर्वथा तौन भवन तज वाहर जावे।
क्षण नाचै क्षण कूदै क्षणक में भस्म उड़ावे।

अविद्या चार प्रकार समझले कारज तूला।
जो अपनो अज्ञान सोई है काणा मूला॥
कहि गिरिधर कविराय पिखे जब एक परातम।
तभी सर्वथा नष्ट होय जो बुद्धि अनातम॥२८५॥
अकड आवरण अविद्या, विक्षेप कंप वाय तरुण।
जकड लिये युग रोगने वैराग्य विवेक दोय चरण
वैराग्य विवेक दो चरण विना चालियो नहिं जावे।
निशि दिन रहै कलेश मोक्ष पद कैसे पावे॥
कहि गिरिधर कविराय छोड़ दुनियाके मकर।
ज्ञान रसायन सेव नष्ट होय कंप अरु जकड२८६
भ्रम लिप्सा कर्ण पटवता, पुनः प्रमाद अधर्म।
५ . . दुखितजे, नहिं जाने श्रुति मर्म॥
जाने श्रुति मर्म पुरुष अपराध न नाशे।
बोध नहोय यथारथ तत्त्व न भासे॥
कहि गिरिधर कवि बँघे अविद्या काम अरुकर्म।
कर्णां पाटवता प्रमाद जिहिं लिप्सा भ्रम॥२८७

धिक्कार करैं त्यहि वेद देव सब करैं निरादर ।
तत्त्वविदोंकी सभामाहिं पावे नहिं आदर ॥
कहि गिरिधर कविराय आपको आपे नाशक ।
जो एतो माने भेद भाव उपास्य उपासक॥२०९॥
दास कहावे वावरे, एकातमके माहिं ।
उपास्य उपासक भावजो, सो स्वप्नेहू नाहि ॥
सो स्वप्नेहू नाहिं जागृतकी कौन कहानी ।
अद्वै रूप अखंड पाइये नहिं जहँ वानी ॥
कहि गिरिधर कविराय देखो यह अजब तमासा।
एकातमके माहिं कहावे बौरे दासा ॥ ३१० ॥
ईश जीव पुनि शुद्ध चिद, जीवेश्वर को भेद ।
अविद्या चिद संबंध यह, पट अनादि कहि वेद ॥
पट् अनादि कहि वेद पंचते अन्तवान है ।
ब्रह्म अनादि अनन्त भेद विन श्रुती मान है ॥
कहि गिरिधर कविराय सो मूरख विश्वेवीस ।
जो वास्तव माने भेद करैं क्षय ताको ईश॥२११॥

काहिगिरिधर कविराय कहांलग कथों किहानी।
ज्ञानी जब बेकैद पुरुषहै कैद अज्ञानी॥ ३०६॥
संग नहीं गो गधेको, सैंधव सिता न मेल।
विड्विराहि सँग इन्द्रको, शोभित नाहिंन केल॥
शोभित नाहिंन केल तेल घृतको नहि योगा।
चक्रवर्ती भूप खरी संग करै न भोगा॥
कहिगिरिधर कविराय जो योगी चहै नदंग।
त्यों प्रवृत्ति निवृत्ति पुरुषको बनै न संग॥३०७॥
कर्म जो अष्ट प्रकारके, कहे जैन मत माहिं।
सो सब धर्म अनात्मा, आतम मे कछु नाहिं॥
आतम में कछु नाहिं याहि में हेतु बखानो।
कर्ता विना न कर्म आत्मा अक्रिय मानो॥
कहि गिरिधर कविराय त्याग किरिया सब भर्म।
उदासीन असंग विषे कहु कैसे कर्म॥ ३०८॥
उपास्य उपासक भाव जो, एता माने भेद।
जन्म मरण भयको लहै, धिक्कारकरे त्यहिवेद॥

मांगन गये सो मररहे, मरे सो मांगन जाय ।
मांग खानो है फकिरको अव्वल सेराजाय ॥
अव्वलसेराजाय सो तो है किसको किसको ।
और किसीकी नाहिं इसीकी है पुनि इसको ॥
कहि गिरिधर कविराय वैराग्य विवेक जो टांगन।
तापरकर असवारी जावे पुनि भिक्षा मांगन ३२०
कम खाने मे जातहै, थूल देह का रोग ।
गम खानेसे लिंग में, व्यापत नाहिन शोग ॥
व्यापत नाहिन शोग दूरहोवत दुचिताई ।
क्रोध दंभ हंकार लोभकी रहे न राई ॥
कहि गिरिधर कविराय वासना त्याग कह्यो शम।
इन्द्रियवत जो चंचल सो भी होत जात कम३२१
टुकरा मिलकर खालेवे, आशन राखे फरक ।
जन समूह में जायके, कवूं न होवे गरक ॥
कवूं न होवे गरक ईन है यही फकरकी ।
जो न तीन परकार त्यागे वात मकरकी ॥

तू जिस्मी आलग तूही साक्षी निजरूप।
तू प्रत्यक कूटस्थ तुहीहै ब्रह्म अनूप॥
कहि गिरिधर कविराय तुहीतो चिन्तामनी।
कामधेनुतुही कल्पतरु तूही तनु तूही तनी२१७
वेणु पात्र मृण्मय करे, आलाबू पुनिदार।
भिक्षुको चारो विहितहै, मनु भणियो निर्धार॥
मनु भणियो निर्धार एक इनमें कोउ राखे।
पात्र भेदना करै यती संग्रह बुध नाखे॥
कहि गिरिधर कविराय धातुका छुहे न रेणू।
जल आनन हित गहे तूंबिका अथवा वेणू२१८॥
कपरा जिसका दशो दिग, जहां रहे तहँ पास।
अन्नोदक की कमी ना, फेर कौनकी आश॥
फेर कौनकी आश आश जिसके सोयाजी।
भावे होवे पण्डित अथवा मूरख काजी॥
कहि गिरिधर कविराय सन्त को मिले जु छपरा॥
दोलकडी की धूनी फेर न चाहे कपरा॥२१९॥

मांगन गये सो मररहे, मरे सो मांगन जाय ।
मांग खानो है फकिरको अव्वल सेराजाय ॥
अव्वलसेराजाय सो तो है किसको किसको ।
और किसीको नाहिं इसीकी है पुनि इसको ॥
कहि गिरिधर कविराय वैराग्य विवेक जो टांगन।
तापरकर असवारी जावे पुनि भिक्षा मांगन ३२०
कम खाने में जातहै, थूल देह का रोग ।
गम खानेसे लिंग मे, व्यापत नाहिन शोग ॥
व्यापत नाहिन शोग दूरहोवत दुचिताई ।
क्रोध दंभ हंकार लोभकी रहे न राई ॥
कहि गिरिधर कविराय वासना त्याग कह्यो शम।
इन्द्रियवत्त जो चंचल सो भी होत जात कम३२१
टुकरा मिलकर खालेवे, आशन राखे फरक ।
जन समूह में जायके, कबूं न होवे गरक ॥
कबूं न होवे गरक ईन है यही फकरकी ।
जौ न तौन परकार त्यागे वात मकरकी ॥

कहि गिरिधर कविराय संग्रह करे न टुकरा
कामिल सोइ फकीर मांग कर खावे टुकरा३२२
खुशी सहित गुजरानहै, मसत फकीरनकी
कभितो मुष्टीचनेकी, कभी खांड पुनि घी
कभीखांड पुनि घी कभी पहिरे पश्मीना
कभी जर्जरा कन्था ओढे होत न दीना।
कहि गिरिधर कविराय शान्ति वृत्ति जिसकीपुशी
तिसको नहिं दिलगीरी व्यापे इकरस खुशी ३२३
लाग्यो मन जिस फकरका, मजहब फकीरी माहिं
कैद मजहबियोंकी जोऊ, तिसमें आवत नाहिं
तिसमें आवत नाहिं जो वहिमियो किया कनूना।
जोजो कथे कलाम सुईसो महाकनूना।
कहि गिरिधर कविराय फकर गफलतसे जाग्यो
फिर कब हो गिरफ्तार रिन्दगीमे मन लाग्यो३२४
हरज न ज्ञानी पुरुपकी, देह पातमे वीर।
शरीर पातहो श्वपच गृह अथवा गंगानीर॥

अथवा गंगानीर मरुस्थल मे वा उत्तर।
ब्रह्मरूप वहभयो गिरे तनु यत्तर कुत्तर॥
कहि गिरिधर कविराय रह्यो नहिं शिरपर करज।
देवऋषि अरु पितृ ऋणकोनहिं यामे हरज२२५॥
जो तुझको तोलाझुके, तूझुक सेर पचीश।
मरोर करै इक तस्सुभर तूकोजे हाथ वाईश॥
कीजे हाथ बाईश रीति व्यवहार कि ऐसी।
जैसा जैसा देव जगत् मे पूजा तैसी॥
कहि गिरिधर कविराय रोतेके संग रोतेजो।
हँसते सॅग हॅस मिलो पुरुष हँसके बोले जो २२६
नारी होवे नर हुवे, युवा वृद्ध जो कोय।
जो जाको चाहे नहीं, ताको चहै न सोय॥
ताको चहै न सोय रीति अज्ञ तज्ञ की येही।
दुष्ट बुद्धि सॅग दुष्ट साधुके परम सनेही॥
कहि गिरिधर कविराय खिलारी साथ खिलारी।

प्रेमी साथ प्रेम करै पशू बालक नर नारी२२७ ॥
जो जिनसे मुरझात है तो तिनसे सकुचात ।
जिसको पिख जो विगस है तिसे देख विगसात ॥
तिसे देख विगसात रीति धुरसे चल आई ।
अज्ञ तज्ञ की रीति न इनमें संशय राई ॥
कह गिरिधर कविराय पुरुष उत्तम है सो ।
राग द्वेषसे रहित जगत् में विचरे जो ॥ २२८ ॥
तुझको हम तैसा चहैं, जैसे हमको तुम ।
निज करतूत को समझके, भयो तुरतही गुम ॥
भयो तुरत ही गुम न बोलन की रही हाजत ।
ज्यूं लीनै तन्तु उतार सॅरंगिया बहुरि न बाजत ॥
कहि गिरिधर कविराय यथा तुम जानत मुझको ।
तैसेही हम जानत हैं निश्चय कर तुमको ॥२२९॥
नेकी नेका साथ जो, खैर खारियत वीर ।
बदी करै सॅग बदो के, संग शरीयत धीर ॥
शरीयत धीर बुरे सॅग करै भलाई ।

इन्सानो की रीति किसो बिरले की आई ॥
कहि गिरिधर कविराय पुरुष जो परम विवेकी ।
जौन तौन परकार करै सबके सँग नेकी ॥३२०॥
चाहे तुझको सर्व जन, जबलग तू अनुसार ।
प्रतिकूल भये ऐसे उड़े, आग लगे घनसार ॥
आग लगे घनसार रहे नहिं पाछे भस्मी ।
सिंहनाद सुन यथा पलावे जम्बुक पश्मी ॥
कहि गिरिधर कविराय आप तू जब निर्वाहे ।
राव रंक नर नारि बाल वृध क्योना चाहे॥३२१॥
हाहाहीही करनसे, होत परस्पर प्रेम ।
करामात से मुलाकातमे, अधिक शक्ति यह नेम॥
अधिक शक्ति यह नेम वाकफी मे यह बल है ।
सिद्धी लगती लगे महिरमी प्रथमें फल है ।
कहि गिरिधर कविराय काट दुनिया का फाहा ।
तिसमे गोता मार न जिसमें हीहीहाहा॥ ३२२॥
हमको वह देखतनहीं, हम निरखे तिस ओर ।

प्रीति हमारी अति भई, लग्यो मचावन शोर ॥
लग्यो मचावन शोर वड़ी अक्किल का खाविंद ।
वह नहिं बोले मुखों करत इह फिरे खुशामद ॥
कहि गिरिधर कविराय खबर जा देवो वाको ।
जोहि हमरा मीत काल त्रय चाहे हमको २२३॥
मुडियो मन जिसवस्तुकी, तरफों दोष निहार ।
सर्व इन्द्रिय तिस विषय सों, हट गये एकै वार ॥
हट गये एकै वार कोऊ तिस तरफ न जावे ।
चित चलियो जिस ओर करण गण पाछे धावे ॥
कहि गिरिधर कविराय ज्यूं फूटो कांच न जुरियो।
तैसे दिलना मिलै तनिकसा जहिते मुरियो२२४
जहुर देखकर नरोके, करी चित्तको तर्क ।
रेमन औंदू बावरे, तू क्यो होवे गर्क ॥
तू क्यों होवे गर्क कोउ नयन कोउ इच्छू ।
कोइ स्वार्थी जान कोऊ बकवादी विच्छू ॥
गिरिधर कविराय शोक ना व्यापे बहुरि ।

आप उपेक्षा करै चीनकर सबके जहुर॥ २३५ ॥
जेती जेती महिरमी, तेतो तेतो पाप ।
जेता करहै संग्रह, तेता सहै सन्ताप ॥
तेता सहै संताप यहतो निश्चय करिजानी ।
जगमें यह परसिद्ध वात कछु नांहिन छानी ॥
कहि गिरिधर कविराय सुनाऊं तुझको केती ।
उतनी हत्या जान वृत्ति वाह्यमुखजेती ॥ २३६ ॥
चीने प्रथम जो आपको, धूलदेह पुनि अमर ।
राग दोष बकवाद पर, सो नर बांधे कमर ।
सोनर बांधे कमर जो ऐसो कभूं न माने ।
सो क्यो मत्सर करै विवेकी परम सयाने ।
कहि गिरिधर कविराय पुरुप सो परम प्रवीने ।
तजकर देह अभिमान आपकोअद्वै चीने२३७॥
अवस्था उत्तम सहजहै, मध्यम धारणा ध्यान ।
शास्त्रचिंतन कनिष्ठ है, अति कनिष्ठ तेहिजान ॥
अति कनिष्ठ तेहिजान वार्ता लौकिक जेती ।

सोतुम अधम पछान शुभाशुभ यावत् तेती ॥
कहि गिरिधर कविराय और सगरो तज फस्था ।
ग्रहण करो इक वही कही जो प्रथम अवस्था३३८॥
कथा न सुननी बांचनी, ना करना परमोद ।
पढे पढावे और जो, वा सँग नाहिं विरोध ॥
वा सँग नाहिं विरोध सुने अथवा कोउ बांचे
भावे धरे ध्यान भावे निशि वासर नाचे ।
कहि गिरिधर कविराय रोग यथा औषध पुन तथा
जिसको भ्रान्ति आजार सुनो निशि वासर कथा॥
आधी साखी कर कहो, क्रोट ग्रन्थको सार ।
ब्रह्म सत्य जग मिथ्या जीव ब्रह्म निर्धार ॥
जीवब्रह्म निर्धार भेद परिछेद शून्य अज ।
निर्विभाग निर्द्वंद्व न जामें सत्व तमो रज ॥
कहि गिरिधर कविराय रहित उपहित उपाधि
परम प्रेमका विषय कह्यो साखीकर आधि३४०॥
द्रष्टा दृश्य न होतहै, दृश्य न द्रष्टा होय ।

द्रष्टाने जब आपको, दृश्यरूप करजोय ॥
दृश्य रूप करजोय इसीते भयो कुचैनी ।
निजते न्यारा मान्यो शैवी शाकत जैनी ॥
कहि गिरिधर कविराय सहे नाना विध कष्टा ।
भ्रान्ति कूपके माहिं पड़्यो जिसदिनमें द्रष्टा२४१
शिक्षा१व्याकरण२छन्द३ज्योतिप४कल्प५निरुक्त६
षट अँग हैं यह वेदके, यामें नाना युक्त ॥
यामे नाना युक्त विना सद्गुरु नहिं पावे ।
ब्रह्म श्रोत्रियनेष्ठी जोगुरु मिले तो आवे ॥
कहि गिरिधर कविराय तजे जब मनसो वीक्षा ।
तब होय यथारथ ज्ञान यही संतनकी शिक्षा॥२४२
यही असीकर ज्ञानकी, करी अविद्या घात ।
लोक ईपणा वासना, भई दीनता पात ॥
भईदीनता पात सहित देह दृश्य असाता ॥
जाति पांति सब गई जगत्का टूट्यो नाता ॥
कहि गिरिधर कविराय भ्रान्ति तिसके कबरही ।

ब्रह्म विद्या तेगहाथमें जिसने गही ॥ ३४३ ॥
लीला तेरी देव जू, दृश्य नाम अरु रूप ।
इन्द्र जालवत् जगत् है, आप अद्वितीय स्वरूप॥
आप अद्वितीय स्वरूप शुद्ध पूरण अविनाशी ।
अजर अमर अखंड निरामय स्वतः प्रकाशी ॥
कहि गिरिधर कविराय रिजकको रच्यो हीराला॥
करी बहाने मौत देव सब तेरी लीला ॥ ३४४ ॥
खिलारी तेरे खेलका, किने न पायो अन्त ।
परिछेद तीन ते शून्य तू, या कारण अनन्त ॥
या कारण अनन्त सन्त ऋषि मुनी बतावत ।
चतुर षट दश अष्ट पञ्चमो वेद अनावत ॥
कहि गिरिधर कविराय लो कहूंभयो लिलारी ।
कहूं श्वपच कहुं विप्र कहूं त्रय देव खिलारी३४५॥
जाके अन्तःकरण में, राग द्वेष की आग ।
तिनको सुख स्वप्ने नहीं, शान्तिन लहै अभाग ॥
न लहै अभाग्य और पुनि किसी प्रकारा ।

विना ज्ञानं नहिं मुक्ति वेदका बजे नगारा ॥
कहिं गिरिधर कविराय धूरि शिर डारो वाके ।
राग द्वेष की अनल जलितहै अन्तर जाके॥३४६॥
मिट गई मूल्याविद्या, भो आनँद को ठाट ।
जैसी करनी रिन्दगी, तैसो गीता पाठ ॥
तैसो गीता पाठ रहैनित उच्चस्वर सो ।
ब्रह्मसागर मे मग्न भयो बचिये त्रय ज्वरसो ॥
कहि गिरिधर कविराय वासना तृष्णा हिटी ।
भो आनँदको ठाट अविद्या मूला मिटी॥३४७॥
असली वस्तु एकहै, अध्या रोपै दोय ।
अपवाद किये फिर एकहै, ऐसे समझे जोय ॥
ऐसे समझे जोय सोई नर कहिये दाना ।
निज स्वरूप व्यतिरेक न जिसको भासे आना ॥
कहि गिरिधर कविराय त्यागकर मसले मसली।
सोई चीज निहारो शीघ्र जो है असली ॥ ३४८॥
बागो फाऱ्यो द्वैतको, भ्रमकी तोरी मेड ।

गुठी निकासी भेदकी, कहां मुक्ति की जैड ॥
कहां मुक्ति की जैड अविद्या मुई लुखरिया ।
बाह्य मुख जो बुद्धि सो बिलमें धंसी चुखरिया ॥
कहि गिरिधर कविराय किया जिस तज्ञको सागो
टूक टूक कर डार दियो तिन भ्रम को वागो २४९
भजन कौन को कहत हैं, सुनहो दीनदयाल ।
वेद जासको कहत हैं, सो तो पुरुष अकाल ॥
सो तो पुरुष अकाल काल तुझमें है ऐसे ।
रज्जुखण्ड के माहिं आरोपित विषधर जैसे ॥
कहि गिरिधर कविराय अन्य का तज कै अजन ।
चीन आप को ब्रह्म न या सम है कोउ भजन२५०॥
यती मध्य मैं यती हूं, ना मैं यती अयती ।
सती मध्य मैं सती हूं, ना मैं सती असती ॥
ना मैं सती असती दती मैं दती अदती ।
मती मध्य मै मती मती तो नहिं अमती ॥
कहि गिरिधर कविराय क्षती मै क्षती अक्षती ।

वर्णाश्रमकी गम्म न जिसमें सो मैं यती ॥३८१॥
नार मध्य में नार हूं, ना में नार अनार ॥
यार मध्य में यार हूं, ना मै यार अयार ॥
ना मैं नार अयार धार मे धार अधार।
पार मध्य में पार पार तो नहीं अपार ॥
कहि गिरिधर कविराय हार मै हार अहार।
मुझमे कल्पित सबै नपुंसक नर पुनि नार३८२॥
करण मध्य में करणहूं, ना मैं करण अकरण ॥
भरण मध्य में भरणहूं, नामै भरण अभरण ॥
ना मैं भरण अभरण हरण मै हरण अहरण।
तरण मध्य में तरण तरण तो नाहिं अतरण ॥
कहि गिरिधर कविराय मरणमे मरण अमरण।
मेरी सत्ता विना थोथेरेहै सब करण ॥ ३८३ ॥
अकल मध्य मै अकल हूं, ना मै अकल अनकल।
सकल मध्य में सकल हूं नामै सकल असकल ॥
ना मै सकल असकल जिस्ममें जिस्म अजिस्म ।

जाप मध्य में जाप हूं ना मैं जाप अजाप ॥
ना मैं जाप अजाप आपको आप प्रकाशक ।
सूक्षम थूल प्रपञ्च सर्व को इकरस भासक ॥
कहि गिरिधर कविराय पाप मैं पाप अपाप ।
जामें जाप सिरात अष्टज्वर जोहै ताप ॥३८७॥
लोचन नव पुनि षट्‌भुजा, तीन शीश त्रय चरण।
रौद्र वर्ण इक कर भसम, सोइ शस्त्र मद हरण ॥
सोइ शस्त्र मद हरण इह ज्वर का रूप बतायो ।
वह ज्वर अष्ट प्रकार चिकित्सा शास्त्र गायो ॥
कहि गिरिधर कविराय गर्भ कर डारे मोचन ।

इस्म मध्य मैं इस्म इस्म तो नाहिं अनिस्म ॥
कहि गिरिधर कविराय नकल में नकल अनकल
मेरे सम्मुख भई गुम्म हो जावे अकल ॥ ३५४ ॥
वाक् मध्य मैं वाक हूं, ना मैं वाक अवाक ।
नाकै मध्य मैं नाकहूं, नामैं नाक अनाक ॥
ना मैं नाक अनाक चाक मैं चाक अचाक ।
पाक मध्य मैं पाक पाक तो नहीं अपाक ।
कहि गिरिधर कविराय ताक मैं ताक अताक ।
मेरे आगे सब खमोश होजावे वाक ॥ ३५५ ॥
कूप मध्य मैं कूप हूं, ना मैं कूप अकूप ।
यूप मध्य मैं यूप हूं, ना मैं यूप अयूप ॥
ना मैं यूप अयूप यूप मैं भूप अभूप ।
रूप मध्यमैं रूप रूपतो नाहिं अरूप ।
कहि गिरिधर कविराय धूप मै धूप अधूप ।
चामें पर्‍यो न निकसियो, कोऊ सो मैं कूप ३५६
ताप मध्य मैं ताप हूं, ना मैं ताप अताप ।

जाप मध्य मैं जाप हूं ना मैं जाप अजाप ॥
ना मैं जाप अजाप आपको आप प्रकाशक ।
सूक्षम थूल प्रपञ्च सर्व को इकरस भासक ॥
कहि गिरिधर कविराय पाप मैं पाप अपाप ।
जामें जाप सिरात अष्टज्वर जोहै ताप ॥३८७॥
लोचन नव पुनि पट्‌भुजा, तीन शीश त्रय चरण।
रौद्र वर्ण इक कर भसम, सोइ शस्त्र मद हरण ॥
सोइ शस्त्र मद हरण इह ज्वर का रूप बतायो ।
यह ज्वर अष्ट प्रकार चिकित्सा शास्त्र गायो ॥
कहि गिरिधर कविराय गर्भ कर डारे मोचन ।
जिस तनमे करै प्रवेश एक घटिक नव लोचन३८८
मालिक अपना आप तू, तुझे न मालिक अन्य ।
समझेगा जिस वक्त यह, तब होवे धन धन्य ॥
तब होवे धन धन्य लोक या पुनि परलोक में ।
संसार सिन्धु को तरे न डूबे कूप शोकमें ॥
कहि गिरिधर कविराय सालिक का जोहै खालिक ।

सो परमेश्वर तूहि पिण्ड ब्रह्माण्ड को मालिक२५७
तेरो ईश्वर तूहिहै, और न दूसर सीव।
महत्व भूलकर आपनो, भयो तुच्छ तू जीव॥
भयो तुच्छ तू जीव न कारज कोउ सँवारयो।
अपनी हत्थी आप आपना काज बिगारयो॥
कहि गिरिधर कविराय आपको आपे हेरो।
आधि व्याधि उपाधि सकल मिट जावे तेरो२६०
एक वस्तु को दो कहै, दोमें एक निहार।
यही भ्रान्ति कर पुरुष यह, उरझे मध संसार॥
उरझे मध संसार न समझतहै इक तनका।
दुख समुद्र में बहै लहै नहिं सुखको कनका॥
कहि गिरिधर कविराय बड़ो सोहै अविवेक।
एक वस्तु को दो कहै पुनि दोको कह एक२६१
क्षणमे होवे रुष्ट जो, दूसर क्षणमें तुष्ट।
रुष्ट तुष्ट क्षण क्षण विषे, ऐसा नर जो दुष्ट॥
ऐसा नर जो दुष्ट मलिन विषयन को किंकर।

रहित व्यवस्था चित्त खुशीतिसकी आतिभयंकर॥
कहि गिरिधर कविराय इह लक्षण पइये जिनमे।
वाका संग मत करो कोप होवे जो क्षणमे २६२॥
हरी पापको हरतहै, सुमरे दुष्ट जो चित्त।
विन इच्छा स्पर्श ज्यूं दहै सुवह्नी नित्त॥
दहै सुवह्नी नित्य तथा जो भोजन खावे।
क्षुधाहरनकी चाह नहीं पुनि तऊ अघावे॥
कहि गिरिधर कविराय वात अव सुनले खरी।
जिसके नाम लिये अघ भाजत सोतू हरी॥२६३॥
जूतो लेकर गंगमें, धोवे वार हजार।
शुद्ध न होवे किसी विध, करे अनेक अचार॥
करे अनेक अचार खूह खण वने अचारी।
केदार खण्ड मे वसे अहिंसक नांहि मातांरी॥
कहि गिरिधर कविराय चतुर धाम फिरे पूजन कूतो।
त्यूं देह न होवे विमल चर्मको जैसे जूतो॥२६४॥
पाक पलीत न होत है, पलीत न होवे पाक

केर आंब नहिं बनतहै, आंब बने नहिं आक ।
आंब बने नहिं आक यथारथ सुनरे भय्या
धेनु न कहिये शुनी शुनी पुनि नाहिंन गैया ।
कहि गिरिधर कविराय सप्त धातुकी देह यह थाक
सर्व प्रकार अशुद्ध आत्मा है इक पाक ॥ ३६५ ।
छोटे परमेश्वर विषे, सिफतां रहें अनेक
निजानन्दके बोध विन, भासित नाहिंन एक ।
भासित नाहिंन एक वड़ो है तो यह घाटा ।
सूधो मार्ग छोड़ पकड्यो कुत्सित बाटा ।
कहि गिरिधर कविराय यह लक्षण पइये खोटे
ईश्वरजीव अभिन्न ज्ञान विन वन रहे छोटे॥३६६।
नवको फील रच, नव नारी की सुखपाल
।र मुकुट को पहिरके, भये आरूढ गोपाल
भये आरूढ़ गोपाल ब्रह्म जो करण
सो लीला विग्रह धार हुये चक्षु इन्द्रिय
कहि गिरिधर कविराय ओढकर कमरी

वंशी शब्द सुनाय मोही जिन ब्रजकी नारी२६७॥
हाथी मुखसों निकस्यो, पूंछ रही कुछ शेष ।
ता निकासबे के लिये, करहै कौन कलेश ॥
करहै कौन कलेश कथन इक शब्द न लागे ।
जान लई जब रज्जु सर्प नहिं कोउ फिर भागे ॥
कहि गिरिधर कविराय नहीं तेरो कोइ साथी ।
नाम रूप प्रपञ्च सकल नू नारी हाथी ॥ २६८ ॥
रत्ता तांबा घर विषे, फिरत गढावत देग
सूई लई छिदामकी, मजदूरी जा तेग ॥
मजदूरी जा तेग जासुकी ऐसी मती ।
अल्प क्रियाको करके चाहै अर्द्ध गती ॥
कहि गिरिधर कविराय नीर भावे मन छत्ती ।
ऐसो हंडो मांगे देकर तांबा रत्ती ॥ २६९ ॥
यद्यपि नरकोउ अति सरल, बोल न जाने हरफ ।
दुर्जनका बल ना चले, जिस तरफ ॥
परमेश्वर एकन छीजे ॥

भोजन मध्य मिलाय हलाहल जे करदीजे ॥
कहि गिरिधर कविराय,कमी नहिं तिसको तदपि।
भाग्य शूर को बात न करनी आवे यद्यपि३७०॥
काचो मन्त्री छोड़के, मन्त्री कीजे, ऐन।
जो गुरु दीयेही मरे, क्यों जहर दीजिये गैन ॥
क्यो जहर दीजिये गैन होय जिससे वदनामी।
तहां न पहुँचे कामुक जो पद लहै अकामी॥
कहि गिरिधर कविराय न चीतो सुनो न बांचो।
आतम विद्या विना और शास्तर सब काचो३७१
भौंडी किस्मतके भये, जोरू मारै जूत।
मजूर होयकर जे रहे, करै निरादर पूत ॥
करै निरादर पूत जो घरते बाहर जावे।
सब जन हाँसी करै तो आदर कहूं न पावे॥
कहि गिरिधर कविराय मोलका लौंडा लौंडी।
वह भी करै मखोल मन्द प्रारब्ध जो भौंडी ३७२
ताले वाले जिनाके, दुश्मन तिनके दफे।

ाटे वाली वस्तु लै, तौभी पावे नफे ॥
ौभी पावे नफे सुनो अब बेनसीबकी ।
करै बात जो भली तो हानी होत जीवकी ॥
कहि गिरिधर कवि मादर पिदर बिरादर साले ।
सबही देत जवाब यह बेवकूफके ताले ॥ २७३ ॥
भाग्यहीनको जो मिलै, चिन्ता मणि कहुँ ठौर ।
देखतही देखत नहीं, जानलेत कछु और ॥
जानलेत कछु और कांच वा पाथर कंकर ।
तथा किसीको सर्वदा प्राप्त चिद्धन शंकर ॥
कहि गिरिधर कविराय हृदयमें करे अनुराग ।
प्रत्यक अपनो आप न चीन्हे बड़ो अभाग२७४।
जानेवारी वस्तु जो, रहै नहीं क्षण एक ।
रहने वारी जाय नहिं, उठे उपाधि अनेक ॥
उठे उपाधि अनेक उष्ण तिस पवन न लागत ।
विधि चलाय ना सके आदमी की क्या ताकत ॥
कहि गिरिधर कविराय कालने तेई खाने ।

भोजन मध्य मिलाय हलाहल जे करदीजे ॥
कहि गिरिधर कविराय,कमी नहिं तिसको तदापि।
भाग्य शूर को बात न करनी आवे यद्यपि२७०॥
काचो मन्त्री छोड़के, मन्त्री कीजे ऐन।
जो गुरु दियेही मरे, क्यों जहर दीजिये गैन ॥
क्यो जहर दीजिये गैन होय जिससे बदनामी।
तहां न पहुँचे कामुक जो पद लहै अकामी ॥
कहि गिरिधर कविराय न चीतो सुनो न बांचो।
आतम विद्या विना और शास्तर सब काचो२७१
भौंडी किस्मतके भये, जोरू मारै जूत।
मजूर होयकर जे रहे, करै निरादर पूत ॥
करै निरादर पूत जो घरते बाहर जावे।
सब जन हाँसी करै तो आदर कहूं न पावे ॥
कहि गिरिधर कविराय मोलका लौंडा लौंडी।
वह भी करै मखोल मन्द प्रारब्ध जो भौंडी ३७२
ताले वाले जिनाके, दुश्मन तिनके, दफे।

सो तो उपजे तिसको जो नरहै बड़भाग ॥
कहि गिरिधर कविराय जो दारा सुत गृह वित्त ।
तिनको पिखे असत्य फेर कहां धावे चित्त२७८॥
मग्नी पाछे हटोरे, कहां भयो जा मग्न ।
आँख मूंदकर बावरे, धस्यो जाय बिच अग्न ॥
धस्यो जाय बिच अग्नि जन्म जन्मांतर रोवे ।
कण्टक तरे बिछाय कहो सुख कैसे सोवे ॥
कहि गिरिधर कविराय पेलकर माया ठगनी ।
आप आपने माँहि पैठ सुख पावो मगनी॥२७९॥
तनक व्यथाके उदयसे, शिथिल होतहै गात ।
लौकिक वैदिक चातुरी, एकै बार पलात ॥
एकै बार पलात खबर कछु रहै न गेहू ।
ऐसे तनुसों पामर विन को करे सनेहू ॥
कहि गिरिधर कविराय कलत्र मित्र जनक ।
कोउ निवार नाहिं सकै देहका दुख इक तनक ३८०
दास आपनो आपहै, तपस्वी पुरुष महान ।

तन्त्र होयकर आपने, विचरे बीच जहान ॥
विचरे बीच जहान अन्यकी तजकर आशा ।
वन पट्टन गिरि गुफा जहां तहँ करै निवासा ॥
कहि गिरिधर कविराय सर्व में भयो निराश ।
आप आपना प्रभू तपोधन आपे दास ॥ ३८१ ॥
यही कदीमी हालहै, मनका सुनरे मीत ।
क्षणमें वर्तै नीतिमें, क्षणमे हो विपरीत ॥
क्षणमें हो विपरीत क्षणक में चहै दुशाला ।
क्षणमें ओढ्यो कंबल चाहे क्षण मृगछाला ॥
कहि गिरिधर कविराय क्षणक में वनहै गेही ।
क्षणहि विरक्त अतीत ख्यालमनके हैं येही ३८२॥
देखे मनके जहुर जब, यही पुरी दिल बीच ।
देहादिक संहात में, और न मन सम नीच ॥
और न मन सम नीच पुरुष को पुनि पुनि फुरहै ।
शब्दादिक जो विषय तिन्हों को हरदम घुरहै ॥
कहि गिरिधर कविराय और करनी किस लेखे ।

जबलग मनको मिथ्या भौतिक दृश्य न देखे ३८३
रे मन मंदी बात तज, गंदा तज हंकार ।
ज्ञान धनुष उरमें गहो, करहु ब्रह्म टंकार॥
करहु ब्रह्म टंकार जरा तू पग धर आगे ।
भ्रम जो पंच प्रकार हृदय ते तत्क्षण भागे ॥
कहि गिरिधर कविराय मूल संसार क खनरे ।
नाश होय संसार द्वैत फिर रहै न मनरे ३८४ ॥
रे मन भोंदू बावरे, छोड़े नहीं कुचाल ।
श्रुति स्मृति सब कह थके, तेरा वही हवाल ॥
तेरा वही हवाल बेसुरा बेताला गावे ।
नाम रूप प्रपञ्च और निशि वासर धावे ॥
कहि गिरिधर कविराय और तू मत कुछ बनरे ।
निज स्वरूपके माहिं सदा स्थितरहु मनरे॥३८५॥
रे मन शब्द स्पर्श जो, रूप पुनः रस गन्ध ।
सर्व दुःख का बीज यह, तू नहिं समझत अन्ध ॥
तू नहिं समझत अन्ध सदा इनही को चाहे ।

अपनी हस्ती आप आपने लनको दाहे ॥
कहि गिरिधर कविराय जो प्रत्यक आनंद घनरे।
तिसहि माहिं रह लीन सुखी तब होवे मनरे ३८६॥
रे मन सूधो होय चल, छांड कपट की रीति ।
छल बल कला विसार सब, करो एकसो प्रीति ॥
करो एकसों प्रीति जो अन्तर व्यापक तेरे ।
देह इन्द्रिय पुनि प्राण सहित जो सबको प्रेरे ॥
कहि गिरिधर कविराय आन गनती मति गनरे।
तज प्रवृत्ति निर्वृत्ति रहो तुम सूधो मनरे॥३८७॥
रे मन भौतिक वर्गमें, तू महन्त परधान।
तेरे पाछे हैं सबै, देह बुद्धि इन्द्रिय प्राण ॥
देह बुद्धि इन्द्रिय प्राण इन्हो में तूहै नायिक ।
क्रिया तेरे अधीन मानसी वाचिक कायिक ॥
कहि गिरिधर कविराय होवे तबहीं धन धनरे ।
जब निर्विकार होरहे सर्वथा इकरस मनरे॥३८८॥
रेमन तासों प्रीति करि, जो सबको धिष्ठान ।

आन ठौर सुख है नहीं, यह निश्चय कर जान ॥
यह निश्चय करजान श्रुति गुरु संत बखाने ।
माधव व्यास वशिष्ठ कहे तुम एक न जाने ॥
कहि गिरिधर कविराय शिवोहं शिवोहं भणरे ।
जो सबको धिष्ठान प्रीति तासों कर मनरे॥३८९॥
माला मनसो कहत है, सुनो देव जग भूप ।
मुझ फेरे क्या होत है, तू न लखै निजरूप ॥
तून लखै निजरूप तो करनीहै सब थोथी ।
केवलहै बकवाद खोल कर पढै जो पोथी ॥
कहि गिरिधर कविराय होत मुख तिनका काला ।
जो प्रत्यक् ब्रह्म भिन्न ज्ञान विन फेरत माला३९०
मनुआ माला सो कहत, सुनरे भोंडी वाम ।
जोमैं लखो स्वरूपको, तुझसो रहा न काम ॥
तुझसों रहा न काम न तुझको कबहूं फेरूं ।
मनिया मनिया करके मध्य चौरस्ते गेरूं ॥
कहि गिरिधर कविराय जब अपना आप पछनुआ।

तुझसो रहा न काम पुकारे ऐसे मनुआ ॥३९१॥
मोटा सोटा चाहिये, हाथ डेढ़ परमान ।
घोटे भंग भुजंग को, तोड़त दंता श्वान ॥
तोड़त दन्ता श्वान कहूं दुर्जन मिलजावे ।
दुश्मन दावेगीर ताहिके मस्तक लावे ॥
कहि गिरिधर कविराय राखिये सुंदर सोंटा ।
अपने बलसे हेठ नहीं छोटा नहिं मोटा ॥३९२॥
देखी तेरी गति सकल, रे मन भौंदू भूत ।
पण्डित मुण्डित पचरहे, समझत नाहिं कुपूत ॥
समझत नाहिं कुपूत बांधरह्यो भ्रमकी मूठी ।
पुनि भोगेको भोगत पत्तल चाहत जूठी ॥
कहि गिरिधर कविराय नपुंसक है तू भेखी ।
मिलो सजाती साथ छोड कर देखा देखी॥३९३॥
रुजू होत जाकी तरफ, जासु पुरुषका चित्त ।
तिसहीको सब देत है, सुत दारा तन वित्त ॥
सुत दारा तन वित्त तिसी क्षण करहे अर्पण

जब मन तिससे हटै फेर कर सकै न तर्पण ॥
कहि गिरिधर कविराय पढे निमाज न साजे उजू।
एक वेर खुद विषे भया तिसका मन रुजू ३९४॥
रे मन ऐसो काम कर, जाते पावे शान्त ।
राग द्वेष मिट जाय सब, आशा तृष्णा भ्रान्त ॥
आशा तृष्णा भ्रान्ति नीचनीहै यह पापिन ॥
जाके अन्तर बसे तिसीको डसैहै सांपिन ॥
कहि गिरिधर कविराय ज्ञान कर तू उत्पनरे।
निवड अँधेरो नाशे मूल अविद्या मनरे॥ ३९५ ॥
कुरासिया रस झूठे पऱ्यो, सांचे रसको छोड़ ।
इन विषयनको भोगते, वीते कल्प करोड़ ॥
वीते कल्प करोड़ साँच कहुँ राम दुहाई ।
जन्म असंख्य विताय शान्ति ना तुझको आई ॥
कहि गिरिधर कविराय खोदतो फिरे अब घसिया
राज सिंहासन छोड़ गुलामी करै कुरासिया३९६॥
भागे मुछांकई तलक, है मसीद तक दौड़ ।

आगे जागा है नहीं, जाता होवे चौड़ ॥
जाता होवे चौड़ तथा परवर्ती जो खल ।
जाति पांति विन नाहिंन इनके पुनि कोई बल ॥
कहि गिरिधर कविराय विरक्त दोनोंको त्यागे ।
निर्भय विचरे संत किसी से डरे न भागे ॥२९७॥
आमय बड़ो प्रमादहै, सर्व दुःखका बीज ।
तिसके आगे भूत जिन, और रोग क्या चीज ॥
और रोग क्या चीज अल्पहै जिसकी आयू ।
देहपात के अन्त विषमता रहै न वायू ॥
कहि गिरिधर कविराय दैव जब आवे वामे ।
प्रथमै देह अध्यास होय पुनि पाछे आमय२९८॥
दुर्जन देखे संतको, धारे मनमें रोष ।
और कोइ वल ना चले, अनहोतो कल्पै दोष ॥
अनहोतो कल्पै दोष वाक्य बोले सब डिसमिस।
ज्यों जंबुक चिचियाय खाय मत टींटू किसमिस॥
कहि गिरिधर कविराय बहुत समझावे गुरुजन ।

तऊ स्वभाव न तजे पातकी ऐसो दुर्जन ॥३९९॥
ज्ञानी चाहत ज्ञानको, मानी चाहत मान ।
गुजरानी गुजरान में, होय रहे गलतान ॥
होय रहे गलतान तीन यह भारी सरिता ।
आतम बेते विना दूसरा नहिं कोइ तरता ॥
कहि गिरिधर कविराय जिते नर हैं अज्ञानी ।
को चाहत गुजरान मान कोउहो रहे ज्ञानी॥४००॥
पोसत पीवे वारुणी, खात अफीम मजून ।
गटके गांजा चरस जो सो वैराग ते शून ॥
सो वैराग्य ते शून्य अन्यथा है अभिसन्धी ।
अहो पोह से रहित बुद्धि तिनकी भई अन्धी ॥
कहि गिरिधर कविराय न हूजे तिनका दोसत ।
भंग तमाखू खात वारुणी पियत जो पोसत४०१॥
श्वान स्यार अहि सिंहका, जिसमे रहे खवास ।
मिले न जिस दिन वखत शिर, पांचो उडे हवास॥
पांचो उड़े हवास चढे नख शिप जर दाई ।

सब बाई पचजाय कजाकी रहै न राई ।
कहि गिरिधर कविराय दरिद्री होवै ज्वान
यह अफीममें सिफता वृत्ती करै ज्यों श्वान४०२।
जेते गुण विजया विषे, कहि न सक कोउ लोग
एक दोष कछु कहतहौं, सोहै सुनबे योग।
सोहै सुनवे योग्य भंग जब पीवे भंगी
चढे जो ताको अमल बुद्धि होवे बहुरंगी ।
कहि गिरिधर कविराय सुदाइ होवत केते
को कवि करै बखान जहुर विजया में जेते ४०
हुक्कासे हुरमत गई, नियम धर्म गयो छूट
दाम खर्च कर लियो तमाखू, गईहिये की फूट
हिये की फूट आगको घर घर डोले
घर आग को जाय सोई कुरराती बोले
गिरिधर कविराय लगै जब यमको
प्राण जायँगे छूट सहाय होवे नहिं हुक्का ॥४
लूचा तिसनू आखिये, जिसके मनमे

लोच नामहै चाहका, चाह बनत न पोच ॥
चाह बनत नर पोच पोच का अर्थ है अधम।
ख्वाहिश रहित जो पुरुष देव तिसवंदे कदम ॥
कहि गिरिधर कविराय ज्ञानी ऊँचा सूचा।
अज्ञानी देह अभिमानी कामी पामर लूचा४०५
राम बढाये सो बढ़े, बल कर बढ़यो न कोय।
बल छल करके जो बढ़े, सो प्रभु दीन्हें खोय ॥
सो प्रभु दीन्हें खोय खर दूषण ताडका वाली।
सह कुटुम्ब कियो नाश जो रावण बड़ो कुचाली।
कहि गिरिधर कविराय त्याग कर लौकिक काम।
हरदम आठो याम जपोहं सीता राम ॥ ४०६ ॥
राम एकलो करतहैं, सर्व जनोंके काम ॥
तिसको तजकर मूढजन, जपैं और को नाम ।
जपैं और को नाम तिनों की है कमबख्ती ।
वस्तु छोड कूवस्तु गहै यह तो बदबख्ती ॥
कहि गिरिधर कविराय न तिनको होत अराम।

सब बाई पचजाय कज़ाकी रहै न राई ॥
कहि गिरिधर कविराय दरिद्री होवे ज्वान ।
यह अफीममें सिफता वृत्ती करै ज्यों श्वान४०२॥
जेते गुण विजया विषै, काहि न सक कोउ लोग ।
एक दोष कछु कहतहौं, सोहै सुनवे योग ॥
सोहै सुनवे योग्य भंग जब पीवै भंगी ।
चढै जो ताको अमल बुद्धि होवे वहुरंगी ॥
कहि गिरिधर कविराय सुदाई होवत केते ।
को कवि करै वखान जहुर विजया में जेते ४०३
हुक्कासे हुरमत गई, नियम धर्म गयो छूट ।
दाम खर्च कर लियो तमाखू, गईहिये की फूट ॥
गई हिये की फूट आगको घर घर डोले ।
जिस घर आग को जाय सोई कुरराती बोले ॥
कहि गिरिधर कविराय लगै जब यमको रुक्का ।
प्राण जायँगे छूट सहाय होवे नहिं हुक्का ॥४०४॥
लूचा तिसनू आखिये, जिसके मनमें लोच ।

लोच नामहै चाहका, चाह बनत न पोच ॥
चाह बनत नर पोच पोच का अर्थ है अधम।
ख्वाहिश रहित जो पुरुष देव तिसवंदे कदम ॥
कहि गिरिधर कविराय ज्ञानी ऊँचा सूचा।
अज्ञानी देह अभिमानी कामी पामर लूचा४०५
राम बढाये सो बढ़े, बल कर बढ्यो न कोय।
बल छल करके जो बढ़े, सो प्रभु दीन्हें खोय ॥
सो प्रभु दीन्हें खोय खर दूषण ताडका वाली।
सह कुटुम्ब कियो नाश जो रावण बड़ो कुचाली।
कहि गिरिधर कविराय त्याग कर लौकिक काम।
हरदम आठो याम जपोहं सीता राम ॥ ४०६ ॥
राम एकलो करतहै, सर्व जनोंके काम ॥
तिसको तजकर मूढजन, जपै और को नाम।
जपैं और को नाम तिनों की है कमबख्ती।
वस्तु छोड कूवस्तु गहैं यह तो बदबख्ती ॥
कहि गिरिधर कविराय न तिनको होत अराम।

सब बाई पचजाय कजाकी रहै न राई ॥
कहि गिरिधर कविराय दरिद्री होवे ज्वान ।
यह अफीममें सिफता वृत्ती करे ज्यों श्वान४०२॥
जेते गुण विजया विषे, कहि न सक कोउ लोग ।
एक दोष कछु कहतहौं, सोहै सुनवे योग ॥
सोहै सुनवे योग्य भंग जब पीवे भंगी ।
चढे जो ताको अमल बुद्धि होवे बहुरंगी ॥
कहि गिरिधर कविराय सुदाई होवत केते ।
को कवि करै बखान जहुर विजया में जेते ४०३
हुक्कासे हुरमत गई, नियम धर्म गयो छूट ।
दाम खर्च कर लियो तमाखू, गईहिये की फूट ॥
गई हिये की फूट आगको घर घर डोले ।
जिस घर आग को जाय सोई कुरराती बोले ॥
कहि गिरिधर कविराय लगै जब यमको रुक्का ।
प्राण जायँगे छूट सहाय होवे नहिं हुक्का ॥४०४॥
लूचा तिसनू आखिये, जिसके मनमें लोच ।

करै अनेक प्रलाप तात यह हमरी माता ।
यह हमरी है नारि य हमरे हैं लघु भ्राता ॥
कहि गिरिधर कविराय पुत्र यह हमरे पोते ।
चिन्ता सागर बीच परो नित खावे गोते ॥४१०॥
धक्के खावन की भई, चिद्धन को जब चाहि ।
जान बूझके आपही, लग्यो करन गुनाहि ॥
लाग्यो करन गुनाहि न देखे कछु मदमत्ता ।
आदर कोऊ न करै लोक सब कहैं कुपत्ता ॥
कहिं गिरिधर कविराय विषय शब्दादिक तक्के ।
या प्रकार परमेश्वर खावन लाग्यो धक्के ॥४११॥
मौज होइ चिद्देवकी, शब्दादिक किये गजाय ।
विन इच्छा परयत्न विन, पावन लग्यो सजाय ॥
पावन लग्यो सजाय रुवाय विना यहु रोवे ।
ज्यों कोउ तरे बिछाय गोखुरू ऊपर सोवे ॥
कहि गिरिधर कविराय आसुरी राखी फौज ।

प्रत्यक ब्रह्म पृथक् कर जान्यो जिसने राम ४०७
वैरी तेरो और नहिं, वैरी इक बदफैल ।
तू कुबुद्धिको छोड़ के, दशो दिशा करसैल ।
दशो दिशा कर सैल तुझे फिर कोय न रोके ।
ऐसोको संसार माहिं जो तुझको टोके ॥
कहि गिरिधर कविराय आप जब बनै न गैरी ।
सर्व जगत् हो मित्र कोऊ फिर रहै न वैरी४०२॥
मरजी चेतन की जबै, झख मारन की होय ।
मृग तृष्णाके नीरमे, वहि चाल्यो बिन तोय ॥
वहिचाल्यो बिन तोय न कहूं किनारो पावे ।
कभी ऊर्ध्व कभी अर्द्ध पुनः पुन गोते खावे ॥
कहि गिरिधर कविराय दीजिये किस ढिग अरजी।
परमेश्वर की भई आप जब ऐसी मरजी ॥४०९॥
गोते खावन को लग्यो, परमेश्वर जब आप ।
कही न माने वेदकी, करे अनेक प्रलाप ॥

अविद्या का तव नाम खोज कर विद्या राख्यो ॥
कहि गिरिधर कविराय मांस खा अचै शराव ।
इन्हीं लक्षणो आप भयो परमेश्वर खराव॥४१५॥
तुफान देखनकी जगी, चेतनको अभिलाप ।
परमारथकी तरफते, मूंद लई निज आंख ॥
मूंदलई निज आँख तभी होयो आवरण ।
बहुरो भयो विक्षेप लग्यो फिर जन्म अरु मरन ॥
कहि गिरिधर कविराय चढ्यो अविवेक जुमान ।
स्वस्वरूप नहिं देखे बकने लग्यो तुफान॥४१६॥
पाप परमेश्वरको लग्यो, कल्पितदेह अध्यास ।
अहं ब्राह्मण अहं क्षत्रिय, बके न करे कयास ॥
बके न करे कयास ज्ञानहै और प्रकारा ।
करहै और प्रकार रोग यह अतिही भारा ॥
कहि गिरिधर कविराय पिखे जब अपनो आप।
मूल अविद्या सहित नष्ट होय पुण्यरुपाप॥४१७
झगरा तैने पाइया, तूही इसे निवेर ।

दैवी संपति दूरकरी चिद्घन की मौज॥४१२॥
रोगी चेतन हो रह्यो, ग्रस्यो वहम आजार।
कभी स्वर्ग पुनि नरक की लाग्यो खान पजार॥
लाग्यो खान पजार रैन दिन राखे किस्सह।
हम अमुके तू अमुकः इसमें मेरो हिस्सह॥
कहि गिरिधर कविराय बुद्धि भइ नख शिख सोगी।
विना वित्त कफ वाय भयो परमेश्वर रोगी।४१३
हत्या आतमको लगी, नाम रूप अभिमान।
तब हत्या यह ऊतरे, होय यथारथ ज्ञान॥
होय यथारथ ज्ञान रहै नहिं ऐंचो तानी।
देख और की क्रिया न उपजे रंच गलानी॥
कहि गिरिधर कविराय भूलकर अपनी सत्या।
हन्ता ममता त्वन्त लगी परमेश्वर हत्या॥४१४।
खराब होन का उठ्यो जब, चिद्घन काहिं तरंग।
चरस तमाखू पोस्ता, पीवन लाग्यो भंग॥
पीवन लाग्यो भंग अशुद्धको शुद्ध कर थाप्यो।

होवे खुशी कमाल फौत दिलगीरी तबहीं॥४२०॥
अल्ला शाह रग ते नजीक, जाका सभी जहूर ।
बातन जाहिर यक अलिफ, हस्ती इल्म सरूर ॥
हस्ती इल्म सरूर नूर हर वखत है हाजर ।
परवर दगार खुदावन्द बरहक यह कादर ॥
कहि गिरिधर कविराय मार तिनके शिर खल्ला ।
जो खुद बखुद विन दिगर और को मानत अल्ला ॥
आवेतो अटकावना, जावे तो नहिं रोक ।
इस लौकिक व्यवहारमें, हर्ष शोक नहिं टोक ॥
हर्ष शोक नहिं टोक नहीं ख्वाहिश इक माशा ।
फकीरी करनी लगी जबै फिर किसकी आशा ॥
कहि गिरिधर कविराय कोई रोवे कोइ गावे ।
नहीं किसीसे काम भावे जावे मत आवे ॥४२२॥
हिन्दी माहिं फकीर को, अक्षर लागे तीन ।
चार हरफ पुनि फारसी, जानत है परवीन ॥
जानत है परवीन जो हरफों काहे अर्थ ।

दूसर सों मिवरे नहीं, यही अटपटो फेर ॥
यही अटपटो फेर आप सुरझाये तो सुरझे ।
और लगावे हाथ तो उलटो दुगनो उलझे ॥
कहि गिरिधर कविराय भ्रान्ति का पटको पगरा ।
अहंब्रह्म जब लहै तभी यह चूके झगरा ॥४१८॥
हिन्दु अस्ति भाति प्रेम,तुरुक हस्ति इल्म सरूर॥
वहु वरहक्क ब्रह्मरूप, वहु स्व प्रकाश खुदनूर ।
स्व प्रकाश खुदनूर कहत हैं जाके ताईं ॥
ला जवान अवाक्य अरूप वेगून अलाई ॥
कहि गिरिधर कविराय सोईतू आनँद सिन्धु ।
जाका सुमरन करत सर्वदा तुरुक अरु हिन्दु४१९
तबही मिहर खुदायकी, जब करे फकीर दवाय ।
कदम पवे दरवेश का, होवे रद्द बलाय ॥
होवे रद्द बलाय न होवत कोऊ हरकत ।
मद्दत जिसकी फकर तिसी घर माहीं बरकत ॥
कहि गिरिधर कविराय करे जमालबैकेदोंका जबहीं

सिपय वासना से रहित, जगमें विरलो साध ॥
जगमे विरलो साधु नहीं जिसके घट लिप्सा ।
शब्दादिक वाको भासें निश्चय करके रिपुसा ॥
काहि गिरिधर कविराय नागनी है यह कृष्णा ।
जिसके अन्दर वसै तिसीको डस है तृष्णा ४२६॥
चल चल चितमे लगरही, विन धैरज संतोष ।
चित्त एकागर ते विना, क्योंकर पावे मोक्ष ॥
क्योकर पावे मोक्ष वुद्धि वाह्य सुख धावे ।
वोध यथारथ भये फेर वृत्ति कहूं न जावे ॥
कहि गिरिधर कविराय अविद्या जोहै दलदल ।
तिससे निकसे पुरुप मिटे सब कल कल चल चल
प्रेय वाक्य परदानते, तुष्ट होय सब जन्त ।
ताते प्रेय वक्तव्य है, क्या वचन दरिद्री सन्त ॥
क्या वचन दरिद्री सन्त न जिसमे कौड़ी लागत।
वे शुमार हो लाभ फेर क्यो तिससे भागत ॥
कहि गिरिधर कविराय जो प्राणी चाहै श्रेय ।

विना अर्थ के जाने अहमक रहै अनर्थ ॥
कहि गिरिधर कविराय अविद्या जिसने निन्दी ।
सोई मुरशद फकर, फारसी पढ़ो वा हिन्दी ४२३॥
राख्यो नाम फकीर तैं, मूल न आई साज ।
जो वजाय नहिं जानता क्यों ले बांधे साज।
क्यों ले बांधे साज बड़ी अक्कल के मालिक ॥
फारखती जब लई जगत सों फिर क्या तालक ॥
कहि गिरिधर कविराय जिन्होने खुदरस चाख्यो।
सोई फकर कमाल इसम तिन सांचा राख्यो ४२४
फारग जबलग न होवे, फकीरी तबलग दूर ।
ख्वाहिश दुनियाकी करे, फकीर नहीं मजदूर ॥
फकीर नही मजदूर पखंडी है वह कसबी।
भावे राखे माला अथवा फेरे तसबी ॥
कहि गिरिधर कविराय जान तिसको अति वारक।
जोफकरकहाकर नामजगत् सोभयोनफारग ४२५
तृष्णाने सब ग्रसलिये. वच्यो एक वा आध ।

अथवा वस न्यारा रहो वा सबके शामिल ॥
कहि गिरिधर कविराय फटकडी लगे न मांई ।
विन मजीठ रंगरेज विना दिल रंगो सांई॥४२१॥
सांई लोक पुकारदे, रेमन होय मलंग ।
असल फकीरीका चढ़े, क्या तिस आगे भंग ॥
क्या तिस आगे भंग वारुणी चरस धतूरा ।
नशे करै सब रद्द फकर जब होवे पूरा ॥
कहि गिरिधर कविराय किसीको तू न बुलाई ।
तुझे न टोंके कोय विचर निर्भय हो सांई॥४२२॥
सांई लोक पुकारदे, रेमन हो बेकैद ।
तीन जिस्मते भिन्नकर, खुद को देखनपैद ॥
खुदको देख नपैद किसीको करो न सिजदा ।
तुझको काफर कहै जबी तू क्योंहै खिजदा ॥
कहि गिरिधर कविराय जुगति सब तेरी झांई ।
नहिं तुझते कुछ जुदा समझले ऐसे सांई॥४२३॥
सांई लोक पुकारदे, रेमन हो दरवेश ।

कटु विपर्यय वक्र वाक्य तज बोले प्रेय ॥४२८॥
साईं लोक पुकार दे, रे मन होय फकीर।
शरह मजहब हद हिरस की, पग सों मेटलकीर॥
पगसों मेटलकीर किसी सों कर नहिं दावा।
सब तुझको करैं सलाम जानकर आदम बाबा॥
कहि गिरिधर कविराय गैर कमकर है कांई।
छोडै दिगर दलील तुही किबला है साईं॥४२९॥
सांई लोक पुकार दे, हों मनरे बे निवा।
ला शरह बे मजहबकी, पहिरो कुलह कवा॥
पहिरो कुलह कवा कुफर का परदा फाडो।
यावत् दिगर दलील सकल का मूल उपाडो॥
कहि गिरिधर कविराय जो साहब सभनी थांई।
मैं हो सोइ खुदाय पढो कलमां यहु साँई॥४३०॥
सांई लोक पुकारदे, रेमन होय खमोश।
खुदके भीतर गुम्म होय, खुदकी रहै न होश॥
खुदकी रहै न होश तभी तुम होवे कामिल।

अथवा बस न्यारा रहो वा सबके शामिल ॥
कहि गिरिधर कविराय फटकडी लगे न मांई ।
विन मजीठ रंगरेज विना दिल रंगो सांई॥४३१॥
सांई लोक पुकारदे, रेमन होय मलंग ।
अमल फकीरीका चढ़े, क्या तिस आगे भंग ॥
क्या तिस आगे भंग वारुणी चरस धतूरा ।
नशे करै सब रद्द फकर जब होवे पूरा ॥
कहि गिरिधर कविराय किसीको तू न बुलाई ।
तुझे न टोंके कोय विचर निर्भय हो सांई॥४३२॥
सांई लोक पुकारदे, रेमन हो बेकैद ।
तीन जिस्मते भिन्नकर, खुद को देखनपैद ॥
खुदको देख नपैद किसीको करो न सिजदा ।
तुझको काफर कहे जबी तू क्योंहै खिजदा ॥
कहि गिरिधर कविराय जुगति सब तेरी झांई ।
नहिं तुझते कुछ जुदा समझले ऐसे सांई॥४३३॥
सांई लोक पुकारदे, रेमन हो दरवेश ।

काल हालको डालके, खुदमें कर परवेश॥
खुद में कर परवेश शरहदा फडो न पल्ला॥
सब दुनिया की तरफों हटके बन रहो झल्ला॥
कहि गिरिधर कविराय जानले अपने तांई।
जिस जानन करऔर जानना रहै न सांई॥४२४॥
वासा जन समुदाय में, साधू को जो होत।
यामें कारण कौन है, कोइ पूर्व पाप उद्योत॥
पूर्व पाप उद्योत विना ढिग लगै न मण्डी।
जागे खोटे भाग्य होय तब ऐसी भण्डी॥
कहि गिरिधर कविराय नाश जब होय दुराशा॥
फेर न मनको भावे प्राकृत जनों में वासा॥४२५॥
सोनो जैसो भूमिपर, तैसो ऊपर खाट।
जैसो रेशम ओढनो, तैसोही पुनि टाट॥
तैसोही पुनि टाट यथा घृत दुग्ध मलाई।
तथा सुकोदों चूर्ण निमक विन दाल कलाई।
कहि गिरिधर कविराय काटनो ना कछु वोनो।

जागेसे नहिं बांधो घाटो नहिं कछु सोनो॥४३६॥
तंगी तनक न सहसके, करै न औरन तंग।
द्वितिय रंग तहँ ना चढै, जहां असल इकरंग॥
जहां असल यक रंग रंग सोई है सांचा।
और जो कृत्रिम रंग सकल तुम जानो काचा॥
कहि गिरिधर कविराय फकर जो सदा असंगी।
क्यो उपाधि मे पड़ै कौन विध देखे तंगी॥४३७॥
अशन वसन भू कनक पुनि, वादा चौप गुलाम।
हडवाई हथियार वहु, यह नव निधिको नाम॥
यह नव निधिको नाम चहै जिनको परवर्ती।
भोजन छादन विना और सव तजे निवर्ती॥
कहि गिरिधर कविराय छोडकर सगरे व्यसन।
आतम चिन्तन करै संत जन पाकर अशन४३८
कता सो आयो आपनी, आगई जिसे पसंद।
कोई मग्न विच महजबदे, कोइ ला मजहवमें रिंद॥
कोइ ला मजहबमें रिंद किसीको भावे कम्वर।

इष्ट किसीको चैल किसीको शाल दिगम्बर ॥
कहि गिरिधर कविराय अज्ञान जिसने गहि हता ।
सो आप सर्व समर्थ किसीकी धरे न कता ४३९॥
शहर फकर को चाहिये तथा भैंसको छलिर ।
नहिर बाघको चाहिये, तथा कवीको वहिर ॥
तथा कवीको वहिर मधुरता मधुर खोरको ।
महीपाल को नीति लष्टिका चश्म फोरको ॥
कहि गिरिधर कविराय संत जन आठो पहिर ।
आतम चिन्तन करै रहे वनमें वा शहिर ॥४४०॥
मूर्ख लोकना लख सके, संतनके जो फरेब ।
साधु कहावे औलिये, जेकर चलें अरेब ।
जेकर चलें अरेब तो शोभा होवत दूनी ।
बाजे बे परवाह सन्त जो महा जनूनी ॥
कहि गिरिधर कविराय विवेकी कोऊ पूरुष ।
संत मायाको चीन्हें नाहिंन जानत मूरुख४४१॥
पशु जो पञ्च प्रकारके, तिनका करतू त्याग ।

षष्टम सद्गुरु मुक्तजो, तिनके चरणों लाग ॥
तिनके चरणों लाग भागकर इनसो दडबड़।
श्रवण करो महा वाक्य छोड प्रवृती अडबड़ ॥
कहि गिरिधर कविराय विभाग न जामें तशु।
तामें द्वैत आरोपे विना विचारे पशु ॥ ४४२ ॥
दरजा जो है फकर का, सो तुम सुनलो यार।
चार हर्फ का मायना, दृढ़कर मनमे धार ॥
दृढ़कर मनमें धार तभी तुम होवे फकीर।
गम जो दोनो आलम का सो न करै तगीर ॥
कहि गिरिधर कविराय रहै ना शिरपर करजा।
बैकैदो हक्क परस्तो का जबपावै दरजा ॥ ४४३॥
सरिश्ता सुनो फकीरका, तृष्णा करनी भंग।
भिक्षा खानी मांगके, त्याग सर्व का संग ॥
त्याग सर्व का संग सो एका एकी रमे।
मन चंचल को मार करण श्रोत्रादिक दमे ॥
कहि गिरिधर कविराय मिले कोदों वा पिस्ता ॥

हर्ष विषाद न उठै यही फकरन का सरिश्ता ४४१
फखे रहै तो रहनदे, राजी रहे तो रहो
निकस आवे तो निकसन दे, बहाजाय तो वहो।
वहाजाय तो वहो मरो वा बहुदिन जीवो।
सुथरेशाह कि उक्ती घोल बताशे पीवो।
कहि गिरिधर कविराय भ्रान्तिको करदे दफे।
और होवे तो होवो आप मत हूजे खफे॥४४५॥
तन्त्र आपने भयो जब, छोड परतन्त्र पाप।
ब्रह्म चीन यो आपको, जपे कौन को जाप॥
जपे कौनको जाप करै फिर किसकी सेवा।
भिन्न आपसे देखे नहिं कोइ देवी देवा॥
कहि गिरिधर कविराय जपे निशि वासर मन्त्र।
अहं सच्चिदानन्द अखण्ड अद्वितीयस्वतन्त्र४४६॥
मौला लोक पुकारदे, रेमन होला चट्ट।
जो आवे सो खायले, संग्रहकी जड़ पट्ट॥
संग्रहकी जड़ पट्ट भूलकर नाम न लेवो।

दंभ कमना विना जो दीया जाय सो देवो ॥
कहि गिरिधर कविराय फेर ना होवे हौला ।
जानले तहकीक आपको जब तू मौला॥ ४४७॥
मौला लोक पुकारदे, रेमन होला शक ।
जहँ बोले तहँ बोल यह, मन बरहक बरहक्क ॥
मन बरहक बरहक्क कलाम यह पढ़ो हमेशा ॥
औरन का सँग त्याग करो सोहबत दरवेशा ॥
कहि गिरिधर कविराय मार तिनके शिर पौला ।
खुदसे न्यारा माना जिसने दूजा मौला॥ ४४८॥
अल्ला लोक पुकारदे, रेमन होला वैर ।
दिल भावे फिर तहां रहो, जहां जाय तहँखैर ॥
जहां जाय तहँ खैर जबां में होवे शीरी ।
इसके तुल्य न करामात ना है कोइपीरी ॥
कहि गिरिधर कविराय तोड़ भ्रमगढ का हल्ला।
मन खुदाय बेशक्र पाक मौला मन अल्ला ४४९
अल्ला लोक पुकारदे, रेमन हो बेफिकर ।

विना आपने आपसे, छोड़ दूसरा जिकर ॥
छोड़ दूसरा जिकर समझकर खुदको मालक ।
फारग सबते होय किसीते रख ना तालक ॥
कहि गिरिधर कविराय फेरकोइ फड़े न पल्ला ।
जानेगा त्रा शक्क आपको जब तू अल्ला॥४८०॥
बैठे खूंटी लोहकी, चले तो मूठी पौन ।
कथै तो ब्रह्मज्ञानकी, नहिं तो कर रहै मौन ॥
नहिं तो कर रहै मौन संत की यह मर्यादा ।
भूंख लगै मँग खाय टूकरा बासी ताजा ॥
कहि गिरिधर कविराय विषय से मनको ऐंठे ।
बाह्यमुखी जन पास जायकर कबौं न बैठे ४८१॥
[illegible] हो आराम की, धावे खण्ड केदार ।
५० न [illegible] होय, तब सुखको कहँदीदार
सुखको कहँ दीदार और कछु बात न बूझे ।
खाना सोना चलना चतुरथ नाहिंन सूझे ॥
कहि गिरिधर कवि तुंग देखकर बुद्धि डेरानी ।

थावे खंड केदार अराम की होय गिरानी॥४८२॥
माइत अपने आपकी, रे मन हो जिसकाल ।
निदान सहित भ्रमनष्टहो, रहे न कोइ जंजाल ॥
रहे न कोइ जंजाल पुरुष निज होय कृतारथ ।
गुरू शास्त्र औ साधन सगरे भये चरितारथ ॥
कहि गिरिधर कविराय भली जब आवे साइत ।
तब पुमान को होय यथारथ सुदको माइत४८३॥
क्षतिना जीवन्मुक्त की, होवत किसी प्रकार ।
कोऊ प्रतिष्ठा करै पुनि, कोऊ करै तिरस्कार ॥
कोऊ करै तिरस्कार और कोउ निन्दा करहै ।
कोऊ बैठकर पास बहुत विधि स्तुति ररहै ।
कहि गिरिधर कविराय अविद्या मूला गतिः
अपमान मानके किये कहां ज्ञानी की क्षतिः४८४
प्रतिष्ठा विष्टा कूकरी, गौरव रौरव नरक
अभिमान वारुणी पान है, त्रितय त्यागे फरक
... निरतिशय सुख तिस प्रा

निःसंशय दीनता नाशहोय अस श्रुति गावत ॥
कहि गिरिधर कविराय भई तिसकी मति भ्रष्टा ।
गर्व गारुरी करत औ चाहत मान प्रतिष्ठा॥४५५
प्रापति की प्रापति भई, निःसंशय अपरोष ।
मलिन वासना मिट गई, उपज्यो दृढ सन्तोष ॥
उपज्यो दृढ सन्तोष रही कथनी पुनि करनी ।
ज्ञान कला इक प्रकटी मूला विद्या हरनी ॥
कहि गिरिधर कविराय विद्या प्रत्यक समात ।
वर्णन ग्रन्थन को करै भई प्रात की प्रात ॥४५६॥

इति गिरिधरकृत कुण्डलिया दूसरा भाग समाप्त ।

अथ शिक्षा ।

दोहा ।

भेद भ्रम कर्तृत्व भ्रम, पुनि भ्रम संग विकार ।
ब्रह्मोत्तर जग सत्य भ्रम, पांचो भ्रम संसार ॥ १ ॥

बिम्ब प्रतिबिम्बलोहित स्फटिक, घटाकाशगुणमार
कनक कुण्डल दृष्टान्त दे, पांचो भ्रम सुनिवार॥२॥
अध्यास विपर्यय वहिम पुनि, भ्रमके अपर पर्याय।
तत्त्वज्ञानके पातहैं, दूसर नाहिं उपाय ॥ ३ ॥
तत्त्वमसि महावाक्यते, प्रमा अपरोक्ष उदोत ।
अहं ब्रह्म तिसकालमें, नाश विपर्यय होत ॥ ४ ॥

विद्या अविद्या
रोहिणिके परकाशते, भई कृत्तिका पात ।
अखण्डकारवृत्ति विषमता
उदय भई जब कृत्तिका, करी रोहिणी घात॥५॥
आत्मा अनात्मा अध्यास आत्मा जीव
मेष मेषके मेषसों, हो रह्यो मकर विशेष ।
ज्ञान जीव अद्वितीयका अद्वितीय
मकर भयो जब मकर को, वही मेषको मेष॥६॥
विवेक वैराग्य मोह
वृषभ वृषभ युग मिले जब, कीनो सिंह निपात ।
बोध मोह
बहुरि वृषभ उत्पति भयो, तिन हन्यो कुल संहात७

निःसंशय दीनता नाशहोय अस श्रुति गावत
कहि गिरिधर कविराय भई तिसकी मति भ्रष्टा
गर्व गारुरी करत औ चाहत मान प्रतिष्ठा॥४५
प्रापति की प्रापति भई, निःसंशय अपरोप
मलिन वासना मिट गई, उपज्यो दृढ सन्तोप
उपज्यो दृढ सन्तोप रही कथनी पुनि करनी
ज्ञान कला इक प्रकटी मूला विद्या हरनी
कहि गिरिधर कविराय विद्या प्रत्यक समास
वर्णन ग्रन्थन को करै भई प्रात की प्रात॥४५६

इति गिरिधरकृत कुण्डलिया दूसरा भाग समाप्त ।

अथ शिक्षा ।

दोहा ।

भेद भ्रम कर्तृत्व भ्रम, पुनि भ्रम संग विकार
ब्रह्मोत्तर जग सत्य भ्रम, पांचो भ्रम संसार ॥ १ ॥

अथ सप्तभय निवारण मन्त्र ।

दोहा ।

यह भय भय परलोक भय, मरण वेदना जात ।
अन्यरक्षा अन्य गुप्तभय, अकस्मात भय सात१॥

कवित्त—दश जो परिग्रह वियोग चिन्ता यह भय,
दुर्गति गमन परलोक भय मानिये ॥
प्राणनको हरण मरण भय कहावे सो,
रोगादि कष्ट यह वेद ना बखानिये ॥
रक्षक हमारो कोऊ नाहीं अन्य रक्षाभय,
चौर भय विचार अन्य गुप्त मन आनिये॥
अचिन्त्य जोई आवही अचानक कहा धों होई ।
ऐसो भय अकस्मात जगतमे बखानिये ॥ १ ॥

ग्रह भय निवारण मन्त्र । छप्पय ॥

नख शिख मित प्रमाण ज्ञान अवगाहि निरक्षत ।
जीव ईश भ्रमफोर लक्षणा लक्षित रक्षित ।
क्षण भंगुर संसार विभु परवार भार अस ।

कवित्त–जो कुछ विधाता तेरे लिख्यो है लिलाट पाट,
ताहीपर आपनो आप अमल करले ॥
सोनेको सुमेर भावे देख वार पार माँझ,
घटे बढ़े नाहिं यह निश्चय जियधरले ॥
देवी दास कहै जोई होनहार सोई है है,
मनमे विचार रैन दिन अनुसरले ॥
वापी कूप सरिता भरेहे सात सागरपै,
तूतो तेरे वासन समान पानी भरले ॥ १ ॥
हांसीमे विषाद वसै विद्यामे विवाद वसै,
कायामे मरन गुरु वतन मे हीनता ॥
शुचिमे गलानि वसै आपतमे हानि वसै,
जय मांझ हार सुंदरता मे छवि छीनता ॥
रोग वसै भोगमे संयोगमे वियोग वसै,
गुणमे गरभ वसै सेवा माहिं दीनता ॥
और जगरीति जेती गर्भित असाता सेती,
साता की सहेली है अकेली उदासीनता ॥ २ ॥